साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

खेती संदेश

मूल्य : 6/- रुपए

All Subject to Patiala Jurisdiction.

WEEKLY KHETI SANDESH

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 • Chief Editor : Parminder Kaur • Issue Dt. 24-05-2025 • Vol.1 No.1 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • Mob. 90410-14575 • Page 12

पंजाब जल संसाधन विभाग के अध्ययन में खुलासा

पंजाब जल संकट की कगार पर

45.96 प्रतिशत क्षेत्र का भूजल 15 मीटर और नीचे गिरा

पंजाब जलसंकट की कगार पर है। प्रदेश के किसानों द्वारा खेतीबाड़ी के लिए किया जा रहा ब्लॉक में खेती के लिए पानी का अत्याधिक दोहन किया जा रहा है। कुछ हिस्से में जरूरत से ज्यादा

भूजल का अत्याधिक दोहन पंजाब की ज़मीन के अंदर जल को सूखा रहा है। शहरीकरण उद्योग और बढ़ती आबादी भी पानी का अत्याधिक इस्तेमाल कर रही है। पंजाब के अत्याधिक दोहन वाले 115 ब्लॉक के 45.96 प्रतिशत क्षेत्र का भूजल अब 15 मीटर नीचे पहुंच चुका है।

मौजूदा भूजल मूल्यांकन अध्ययन रिपोर्ट की मानें तो पंजाब का 75.16 प्रतिशत क्षेत्र अत्याधिक दोहन का शिकार हो चुका है और यहां से 156.87 प्रतिशत जल ज़मीन से निकाला जा रहा है। पंजाब के लुधियाना के 14, जालंधर के 12, अमृतसर के 10, पटियाला के 9, संगरूर के 8, तरनतारन के 8, गुरदासपुर के 8, होशियारपुर के 6, कपूरथला के 5, बठिंडा के 5, मोगा के 5, फतेहगढ़ साहिब के 5, फिरोज़पुर के 3, एस.बी.एस. नगर के 3, फरीदकोट के 3, बरनाला के 3, मलेरकोटला के 2, मानसा के 2, रूपनगर के 2, फाज़िल्का के 1, मोहाली के 1 पानी मौजूद है, तो कहीं पर कम। ज़मीन से पानी को खींचने के लिए 14.50 लाख से ज्यादा ट्यूबवैल काम कर रहे हैं।

80 के दशक में सिर्फ 53 ब्लॉक में था अत्याधिक दोहन

वर्ष 1984 में पंजाब में अत्याधिक दोहन वाले ब्लॉक की संख्या महज 53 थी, जो वर्ष 1999 में 73 तक पहुंच गई, उसके बाद वर्ष 2009 में इन ब्लॉक की तादाद 110 का आंकड़ा छू गई, वर्ष 2020 में इनकी संख्या 117 तक पहुंच गई और अब इनकी गणना 115 हो गई है। पंजाब में 80 के दशक में सुरक्षित ब्लॉक की संख्या 36 थी। 90 के दशक में यह 38 हो गए। वर्ष 2009 में इनका नंबर 23 हो गया। वर्ष 2020 में इनकी तादाद 17 हो गई, जबकि वर्ष 2024 में सुरक्षित ब्लॉक की श्रेणी में 22 ब्लॉक रह गए हैं।

पंजाब के जलसंसाधन विभाग का कहना है कि अत्याधिक दोहन में ज़मीन का पानी कम रिचार्ज किया जाता है, जबकि निकाला ज्यादा जाता है। अगर किसी जगह पर 100 प्रतिशत पानी रिचार्ज किया जा रहा है और 70 प्रतिशत ज़मीन से निकाला जा रहा है, तो वह जगह भूजल संरक्षण के लिहाज से सुरक्षित मानी जाती है। 100 फीसदी ही पानी जहां रिचार्ज हो रहा है और 100 फीसदी ही निकाला जा रहा है या उससे अधिक निकाला जा रहा है, तो वह जगह ज़मीन के अंदर के जल को सुखा देती है।

नहरी पानी में भूजल की तुलना में होते हैं ज्यादा पोषक तत्व

पंजाब जल संसाधन विभाग के सुपरिटैंडिंग इंजीनियर मनोज कुमार बंसल का कहना है कि प्रदेश के भूजल का संरक्षण करने के लिए विभाग द्वारा कई परियोजनाओं पर काम किया जा रहा है। पानी को कृत्रिम तौर पर रिचार्ज करने के लिए 226 योजनाओं पर काम किया जा रहा है और 129 सरोवरों की स्थापना भी पानी को रिचार्ज करने के उद्देश्य से ही गई है।

नहरों का पानी पोषक तत्वों से परिपूर्ण होता है। यह तत्व खेतीबाड़ी को बेहतर बनाते हैं। नहरी पानी मिट्टी में खाद को जल्द अवशोषित करता है, जबकि ज़मीन से खींचे गए पानी में नहरी पानी की तुलना में कम पोषक पदार्थ मौजूद होते हैं।

जल संरक्षण के लिए उठाए जा रहे यह कदम

1. तीन सालों में 16000 पानी की पाइपलाइन (खालें) डाली गई है।
2. पंजाब की ऐसी 74 नहरों जो 20 सालों से सूख चुकी थी, उन्हें फिर से जिंदा किया गया है।
3. अत्याधिक दोहन वाले क्षेत्रों का अध्ययन किया जा रहा है, जहां की बेकार और बेजान पड़ी नहरों की पहचान की जा सके।
4. गेहूं कटाई के बाद बुवाई शुरू होने से पहले के समय में ज़मीन का पानी रिचार्ज करने पर ज़ोर दिया जा रहा है।
5. मुद्रा एवं जल संरक्षण विभाग, कृषि एवं बागवानी विभाग, भूविज्ञान विभाग के सहयोग के साथ मिल कर जल संरक्षण के लिए एक्शन प्लान तैयार किया जा रहा है।

कुछ सालों से कम हो रही पंजाब में बरसात

रिपोर्ट की मानें तो पंजाब में बीते सालों की तुलना में अब कम बरसात हो रही है। वर्ष 2013 में 620 एम.एम., वर्ष 2014 में 385 एम.एम., वर्ष 2015 में 547 एम.एम., वर्ष 2016 में 427 एम.एम., वर्ष 2017 में 493 एम.एम., वर्ष 2018 में 598 एम.एम., वर्ष 2019 में 579 एम.एम., वर्ष 2020 में 603 एम.एम., वर्ष 2021 में 566 एम.एम., वर्ष 2022 में 579 एम.एम., वर्ष 2023 में 414 एम.एम. बारिश होने का रिकॉर्ड है।

विशेषज्ञों की कहना है कि उत्तरी हिस्से गुरदासपुर के नज़दीक और शिवालिक की पहाड़ियों के नज़दीक साल भर में ज्यादा बारिश गिरती है, जबकि पंजाब के दक्षिण-पश्चिम हिस्से फाज़िल्का के नजदीक औसतन कम बरसात का रिकॉर्ड है। बीते सालों के मुकाबले अब प्रदेश में साल भर में औसतन कम बरसात गिरती है, जिसकी वजह से प्रदेश की ज़मीन प्यासी रह जाती है।

जनहित में जारी

फसलों का सच्चा मित्र है ट्राईकोडर्मा

खेत की मिट्टी में फफूंद की अनेक प्रजातियां पाई जाती हैं। इनमें से कुछ प्रजातियां फसलों को नुक्सान पहुंचाती हैं, वहीं दूसरी ओर कुछ प्रजातियां लाभदायक होती हैं जैसे ट्राईकोडर्मा। ट्राईकोडर्मा एक प्रकार का मित्र फफूंद है, जो विभिन्न प्रकार की दालों, तिलहनी फसलों, कपास, सब्जियों एवं कुछ फल जैसे अमरूद आदि फसलों में पाया जाता है। यह मृदाजनित रोग उकठा, आर्द्रपतन, कंद विगलन और जड़गलन आदि को नियंत्रित करने में एक महत्वपूर्ण योगदान देता है। यह फसलों में रोग उत्पन्न करने वाले फफूंद को रोकता है। ट्राईकोडर्मा, स्वयं मृदाजनित फफूंद है इसलिए यह उचित वातावरण पाकर मृदा में भलीभांति फैलता एवं पनपता है तथा नर्सरी की अवस्था में पौध को सुरक्षा प्रदान करता है।

आशीष कुमार त्रिपाठी, ज.ने.कृ.वि.वि., कृषि विज्ञान केन्द्र, सागर (मध्य प्रदेश) और **ए.के. सिंह,** ज.ने.कृ.वि.वि., कृषि विज्ञान केन्द्र, जबलपुर (मध्य प्रदेश)

मृदाजनित रोग फ्यूजेरियम, पिथियम, राईजक्टोनिया, स्क्लेरोशिया, फाईटोफ्थोरा आदि फफूंद की कुछ प्रजातियों से होते हैं, जो बीज के अंकुरण से लेकर वृद्धि तक पौधों को प्रभावित करते हैं। निदान के लिए रासायनिक दवाओं का इस्तेमाल आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद नहीं होता है। सामान्यत: फफूंद पर रासायनिक दवाओं का प्रभाव 10 से 20 दिनों तक रहता है। यदि फिर इनका प्रकोप होता है तो इन रोगों का प्रबंधन जटिल हो जाता है। लगातार रसायनों के छिड़काव और रासायनिक बीज शोधन से मिट्टी में रहने वाले लाभदायक सूक्ष्म जीवाणुओं पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। निरंतर रसायनों के प्रयोग से रोग पैदा करने वाली फफूंदी में प्रतिरोधक क्षमता भी उत्पन्न होती है तथा रसायनों के अवशेष मानव स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक होते हैं।

क्या है ट्राईकोडर्मा

ट्राईकोडर्मा एक फफूंद है, जो सामान्यत: मृदा में पाई जाती है। इसकी कई प्रजातियां हैं, परंतु उनमें ट्राईकोडर्मा विरडी, ट्राइकोडर्मा हारजिएनम, ट्राईकोडर्मा वाइनेन्स अधिक उपयोगी प्रजातियां हैं। यह फफूंद हरे रंग की होती है। ट्राइकोडर्मा, बीजाण्वुओं के रूप में कोनिडिया तथा क्लेमाईडोस्पोर उत्पन्न करता है। इनमें से क्लोमाईडोस्पोर विपरीत वातावरण में लंबे समय तक जमीन में पड़े रहते हैं। अनुकूल वातावरण मिलने पर यह क्लेमाईडोस्पोर फफूंद तंतु बनाकर वृद्धि करते हैं तथा अधिक संख्या में कोनेडिया (बीजाणु) बनाते हैं।

ट्राईकोडर्मा को यीस्ट या मोलेसेस माध्यम से उगाकर इसका कल्चर तैयार किया जाता है। इस कल्चर को कैल्शियम या चाक पाऊडर में 1:2 के अनुपात में मिलाकर वैटेबल पाऊडर के रूप में उन्नत कल्चर तैयार किया जाता है। इसे 100 ग्राम, 250 ग्राम, 500 ग्राम या 1 कि.ग्रा. मात्रा को कम घनत्व वाली पॉलीथीन की थैलियों में भकर विक्रय के लिए तैयार किया जाता है। इन पैकिंगों का मानक इस प्रकार रखा जाता है कि प्रति ग्राम कल्चर में कम से कम $2/10^8$ या इससे अधिक कॉलोनी फार्मिंग यूनिट (सीएफयू) हों।

ट्राइकोडर्मा की कार्य विधि :- ट्राईकोडर्मा व रोगजनकों जैसे फ्यूजेरियम, पिथियम, राईजक्टोनिया आदि में स्थान व पोषण के लिए स्पर्धा प्रतियोगिता होती है, जिससे रोगजनकों की वृद्धि व विकास अवरूद्ध हो जाता है।

ट्राईकोडर्मा के फफूंद तंतु (एप्रिसोरिया), रोगजनकों के फफूंद के तंतुओं के संपर्क में आते ही उन्हें जकड़ लेते हैं। इसके फलस्वरूप रोगजनकों का विकास अवरूद्ध हो जाता है। इसके उपरांत ट्राईकोडर्मा के फफूंद तंतुओं में प्रवेश करवाकर उन पर अपनी वृद्धि करने लगता है। इतना ही नहीं साथ ही साथ रोगजनकों के अंदर कई प्रकार के एंजाईम जैसे-काईटिनेज, बीटा 1,3-ग्लूकाईनेज, प्रोटिएज आदि छोड़ देता है। रोगजनक की कोशिका भित्ति नष्ट हो जाती है व रोगजनक मर जाता है। ट्राईकोडर्मा विभिन्न प्रकार के प्रतिजैविक एवं अन्य पदार्थ जैसे - ग्लियोविरिडिन, ग्लियोटाक्सिन, अल्काईल पाईरोल्स आदि की उत्पन्न करता है, जो रोग जनकों की वृद्धि पर विपरीत असर डालते हैं। ट्राइकोडर्मा द्वारा काईटिनेज परआक्साईड जैसे पदार्थ उत्पन्न होते हैं जिस कारण पौधों में रोग के प्रति प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न हो जाती है। ट्राईकोडर्मा की मृदा में उपस्थिति अघुलनशील रॉकफास्फेट को घुलनशील बनाती है। इसके साथ ही वह जिंक, मैग्नीशियम, लोहा जैसे सूक्ष्म तत्वों की सक्रियता को बढ़ाती है। इस प्रकार पौधे को सकल पोषक पदार्थ उपलब्ध होते हैं। फलस्वरूप पौधों की वृद्धि और विकास अच्छा होता है। इसके अलावा उनमें रोगजनकों के प्रति लड़ने की क्षमता में वृद्धि होती है।

ट्राइकोडर्मा की प्रयोग विधि

*** बीज उपचार :-** बीज उपचार के लिए 6-10 ग्राम ट्राईकोडर्मा की मात्रा का प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से प्रयोग करते हैं, लेकिन ध्यान यह देते हैं कि यह पाऊडर सभी बीजों में समान रूप से चिपक जाये। यदि बीज की मात्रा अधिक है तो सीड ट्रीटिंग ड्रंम में और यदि बीज की मात्रा कम है तो किसी डिब्बे या पीपे में बीज को ले लें। इसके बाद इसमें निर्धारित मात्रा में ट्राईकोडर्मा पाऊडर मिलाकर अच्छी तरह हिलायें। यदि आवश्यक हो तो बीज पर 5-10 मि.ली. पानी का छींटा दें। फिर उसे 2-3 घंटे तक छाया में सुखाने के बाद बुवाई करें।

*** पौध/पौधे के अन्य वानस्पतिक भागों का उपचार :-** इसका उपयोग उप फसलों, जिनमें पौध रोपण किया जाता है, जैसे-टमाटर, बैंगन, मिर्च और प्याज आदि का बीज के रूप में पौधे के वानस्पतिक भाग का उपयोग जैसे गन्ना, आलू और अदरक आदि में किया जाता है। इस विधि में ट्राइकोडर्मा की 10 ग्राम मात्रा को प्रति लीटर पानी में घोल लें। फिर इसमें रोपण के लिए तैयार पौधों की जड़ों को या पौधों के वानस्पतिक भागों को जैसे कंद, प्रकंद, बल्ब आदि को 10-15 मिनट तक डुबोने के बाद रोपण वाली फसलों को तुरंत रोपित करें। वानस्पतिक भागों को थोड़ी देर छाया में सुखाने के बाद ही खेत में बुवाई करें। पौध उपचार के लिए 10 ग्राम ट्राईकोडर्मा पाऊडर को एक लीटर पानी में मिलाकर इस घोल से पौधे की जड़ों को नम करें।

*** नर्सरी उपचार :-** इस विधि का उपयोग मुख्यत: सब्जी वाली फसलों के लिए किया जाता है, जिनकी पहले हम नर्सरी तैयार करते हैं। फिर इनका रोपण खेत में करते हैं। पौधशाला उपचार के लिए 250 ग्राम ट्राईकोडर्मा पाऊडर को 50 लीटर पानी में घोलें व इस घोल से 400 वर्गमीटर क्षेत्र की पौधशाला की क्यारी को झारा या फव्वारा के माध्यम से तर कर दें या 250 ग्राम ट्राइकोडर्मा पाऊडर को 2-2.5 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर 400 वर्गमीटर क्षेत्र की पौधशाला (क्यारी) में छिड़काव इसकी हल्की गुड़ाई कर मिट्टी में मिला दें।

*** मृदा उपचार :-** मृदा उपचार के लिए 2.0-2.5 कि. ग्रा. ट्राईकोडर्मा पाऊडर को 75-80 कि.ग्रा. पकी हुई गोबर की खाद में मिलाकर 10-15 दिनों के लिए किसी छायादार स्थान में रखकर उसे जूट के बोरे से ढक दें। ध्यान रखें कि उसमें पर्याप्त नमी बनी रहे। बुवाई की अंतिम बखरनी के समय उपरोक्त मात्रा को प्रति हैक्टेयर की दर से बुरकाव करें।

*** खड़ी फसल में छिड़काव :-** खड़ी फसल में फफूंदजनित रोगों के लक्षण प्रकट होने पर इनके प्रबंधन के लिए 6-8 ग्राम ट्राईकोडर्मा को प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

प्रयोग में सावधानियां :

* यह क्षारीय भूमि में कम असरकारक है।

* इसके प्रयोग के समय मृदा में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।

* इसके उत्पादों को विश्वसनीय स्त्रोतों से ही खरीदें।

* इसके उत्पाद प्राप्त करने से पूर्व सुनिश्चित कर लें कि इसे धूप एवं अधिक तापमान में तो भंडारित नहीं किया गया।

* इसे खरीदने के पश्चात तुरंत इस्तेमाल करें। परंतु यदि भंडारण की आवश्यकता हो तो इसे नम व छायादार स्थान पर ही थोड़े समय के लिए भंडारित करें।

* वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए उचित सांद्रण का प्रयोग करें।

* प्रयोग से पूर्व पैकेट में अंकित सभी जानकारियां भलीभांति पढ़ लें।

अनुशंसा :- * ट्राइकोडर्मा का उपयोग सभी प्रकार की फसलों व सब्जियों जैसे कपास, तम्बाकू, सोयाबीन, गन्ना, शकरकंद, बैंगन, चना, अरहर, मूंगफली, मटर, टमाटर, मिर्च, गोभी, आलू, प्याज, लहसुन, बैंगन, अदरक और हल्दी आदि पर किया जाता है।

सारणी : व्यावसायिक स्तर पर ट्राईकोडर्मा का उत्पादन

क्र. सं.	उत्पाद	उत्पादक संस्था
1.	ट्राईकोडर्मा	जैव उर्वरक उत्पादन केन्द्र, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (मध्य प्रदेश)
2.	बायोडर्मा	बायोटेक इंटरनेशनल लिमिटेड नई दिल्ली
3.	इकाडर्मा	मार्गो बायो कन्ट्रोल प्राइवेट लिमिटेड, बेंगलुरू (कर्नाटक)
4.	ट्राईकोडर्मा	अनु बायोटेक इंटरनेशनल लिमिटेड, फरीदाबाद (हरियाणा)
5.	बायोगार्ड	कृषि रसायन एक्सपोर्ट प्राइवेट लिमिटेड, सोलन (हिमाचल प्रदेश)
6.	बायोकान	टाकलाई इक्सपेरिमेंटल स्टेशन, टी रिसर्च एसोसिएशन, जोरहट (असोम)
7.	ईकोफिट	हेक्स्ट एवं शेरिंग एग्रो ईवो लिमिटेड, मुंबई (महाराष्ट्र)
8.	फंगीनिल	क्रॉप हेल्थ बायोप्रोडक्ट रिसर्च सेंटर, गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)
9.	डिफेन्स एस.एफ.	वोकहार्ड लाईफ साइंस लिमिटेड, मुंबई (महाराष्ट्र)
10.	पंत बायोकंट्रोल एजेन्ट-1	फसल रोग विज्ञान विभाग जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर (उत्तराखंड)

सीमायें : इसके उपयोग के बाद 4-5 दिनों तक रासायनिक कवकनाशी का उपयोग न करें।

* सूखी मृदा में ट्राईकोडर्मा का प्रयोग न करें, क्योंकि इसकी बढ़वार व जीवित रहने के लिए नमी बहुत आवश्यक है।

शेष पृष्ठ 6 पर

धान की खेती में शैवाल (काई) खाद का कमाल

डॉ. वी.के. सूरी, संजय खन्ना, डा. आर.सी. जग्गी एवं संजय कुमार रैना, मृदा विभाग, चौधरी सरवन कुमार हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर (हिमाचल प्रदेश)

धान की खेती अक्सर उन स्थितियों में की जाती है जहां पानी की सुविधा हो और फसल की वृद्धि के दौरान 2-3 ईंच गहरा पानी खड़ा रह सके। ऐसा होने पर पानी की सतह पर नीली-हरे रंग की शैवाल बननी शुरू हो जाती है। इस विशेष प्रकार की शैवाल में पौधों की तरह कार्बनडायआक्साईड और पानी से 'क्लोरोफिल' की मदद से भोजन बनाने की शक्ति होती है। इसके ईलावा हवा की नत्रजन को प्रोटीन में परिवर्तित करने की भी इनमें क्षमता होती है। इस प्रकार शैवाल धान की नत्रजन की जरूरतों को आंशिक रूप से पूरा करने में मदद करती है।

अनुसंधान से मालूम हुआ है कि यदि अच्छी किस्म की शैवाल को धान के खेतों में डाला जाए और इसे खेतों में उगने दिया जाए तो धान की नत्रजन की लगभग एक तिहाई जरूरत पूरी हो जाती है। यह शैवाल फसल को नाईट्रोजन के अलावा और भी बहुत सारे तत्व प्रदान करते हैं जैसे विटामिन बी.12, विटामिन सी आदि। ये सब तत्व पौधों की बढ़ोत्तरी में अत्यंत सहायक होते हैं।

एक ही किस्म की शैवाल में अलग-अलग स्थानों पर नाईट्रोजन को प्रोटीन में परिवर्तित करने की शक्ति में काफी अंतर पाया जाता है। नि:संदेह यह अंतर मिट्टी और जलवायु की भिन्नता की वजह से होता है। इसी प्रकार अलग-अलग स्थानों पर इस शैवाल की अलग-अलग किस्में पाई जाती हैं। उदाहरण के तौर पर आसाम और तामिलनाडु में 'नौस्टौक' किस्म और हिमाचल प्रदेश और कश्मीर में 'ऐनाबिना' किस्म अधिक पाई जाती है। शैवाल की ऐसी किस्मों का पता लगाना, विकास करना बहुत आवश्यक है जो अधिकतम नाईट्रोजन कम से कम समय में

हवा से सोख कर धान की फसल को दे सके।

शैवाल का धान की पैदावार पर पड़ने वाले प्रभाव के संबंध में जापान में काफी काम हुआ है। वहां अच्छी किस्म की शैवाल खेतों में डालने पर प्रथम वर्ष में धान की उपज औसतन 2 प्रतिशत, दूसरे वर्ष में 8 प्रतिशत, तीसरे वर्ष में 10-15 प्रतिशत और चौथे वर्ष में करीब 20 प्रतिशत बढ़ी। मिश्र में इसके प्रयोग से धान की उपज में काफी वृद्धि पाई गई। यह भी देखा गया है कि अमोनियम सल्फेट डालने से शैवाल की बढ़ोत्तरी में कमी तथा गली-सड़ी खाद डालने से इसमें काफी वृद्धि हुई।

उस समय के सोवियत यूनियन में इस शैवाल की अच्छी किस्म के उपयोग से धान की उपज औसतन 13-20 प्रतिशत बढ़ी जबकि चीन गणराज्य में 24 प्रतिशत तक वृद्धि रिकार्ड की गई है।

हमारे देश में भी वैज्ञानिकों ने मिट्टी की भिन्न-भिन्न स्थितियों में धान की अलग-अलग किस्मों पर शैवाल के साथ काम कर पाया है कि धान की आधुनिक किस्मों की पैदावार इसके उपयोग से 10-15 प्रतिशत बढ़ जाती है। भारत में हो रहे अनुसंधान से पता चला है कि जिन क्षेत्रों में नत्रजन खाद बिल्कुल नहीं या मामूली डाली जाती है, वहां इस शैवाल के उपयोग से धान की फसल को करीब 25-30 किलोग्राम नाईट्रोजन प्रति हैक्टेयर अर्थात एक किलो प्रति कनाल प्राप्त हो जाती है।

प्रत्येक किसान नीचे दी हुई साधारण विधि से अपनी जरूरतानुसार शैवाल जीवाणु खाद तैयार कर सकता है। इसके लिए 6''×3''×9'' साईज की जी.आई. शीट या ईंटों या सीमेंट की ट्रे बना ली जाए। यदि यह संभव न हो तो इसी साईज के गड्डे बना कर उनमें मोटी प्लास्टिक की शीट बिछाई जा सकती है। इसके बाद करीब 10 किलोग्राम दोमट मिट्टी में 200 ग्राम सुपरफौसफेट खाद अच्छी तरह मिला लें। फिर इसे ट्रे के अंदर बराबर बिछा लें। इसके ऊपर थोड़ा पानी भर लें। दूसरे दिन जब साफ पानी ऊपर आ जाए तो शैवाल की करीब 250 ग्राम कल्चर ट्रे में खड़े पानी में बराबर छिड़क दें। यह कल्चर 20 रूपया प्रति किलोग्राम की दर से काईक्रोबायालोजी विभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई-दिल्ली-110012 से डाक द्वारा प्राप्त की जा सकती है।

मार्च-अप्रैल के मौसम में करीब एक सप्ताह के अंदर पानी की सतह पर शैवाल की मोटी परत बन जाती है। यदि जरूरत हो तो बीच-बीच में ट्रे में थोड़ा पानी डालते रहना चाहिए ताकि हर समय कम से कम दो ईंच पानी खड़ा रहे। जब शैवाल की मोटी परत बन कर तैयार हो जाए तो बाकी के पानी को धूप में सूखने दें। पूरा सूख जाने पर शैवाल के सूखे टुकड़े मिट्टी समेत ट्रे से निकाल लें और पलास्टिक के लिफाफे में संभाल कर रख लें। इस प्रकार तैयार की गई शैवाल को धान में रोपाई के 10 दिन बाद 10 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर यानि 750 ग्राम प्रति कनाल की दर से खड़े पानी में बराबर छट्टे की विधि से डाल दें।

शैवाल के उपयोग से लाभ :- यदि ऊपरचर्चित तरीके से किसान अपने खेत में ही अपनी जरूरतानुसार एक या दो ट्रे लगा कर शैवाल पैदा कर लें तो उसका तकरीबन कुछ भी खर्चा नही होता लेकिन इस से 25 किलोग्राम नाईट्रोजन प्रति हैक्टेयर धान की फसल को दे कर वह रासायनिक खाद (यूरिया/कैन) की बचत कर सकता है। शैवाल के प्रयोग से औसतन प्रति हैक्टेयर 3 क्विंटल धान की उपज में वृद्धि हो सकती है।

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9-ए, अजीत नगर,
पटियाला-147001
(पंजाब)
मो. 98151-04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला-147001
(पंजाब)
मो. 90410-14575

वर्ष : 01 अंक : 01
तिथि : 24-05-2025

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड
डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly **'KHETI SANDESH'** Printed at **Drishti Printers**, Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

भूमि के स्वास्थ्य को बनाए रखने हेतु सुझाव

फसलों से अधिक पैदावार प्राप्त करने के लिए और बढ़िया गुणवत्ता वाली फसलों से उत्पादन लेने के लिए अच्छी किस्म के बीज का उचित समय पर चुनाव, समय पर बुवाई, कीट व्याधियों के नियंत्रण के साथ-साथ भूमि में स्वास्थ्य को कायम रख कर फसलों से अधिक पैदावार ली जा सकती है। भूमि का स्वास्थ्य भूमि के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों पर निर्भर करता है। इंसान की खुदगर्जी और गलत योजनाओं ने भूमि और पानी को इतना प्रदूषित कर दिया है, कि भूमि का स्वास्थ्य बिगड़ गया है। भूमि के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए विशेष तवजो देने की आवश्यकता है। भूमि की ऊपरी स्तह जिसे मिट्टी कहा जाता है, जो हमारे जीवन का आधार है, कि हालात दिन प्रति दिन बिगड़ते जा रहे हैं। इसकी मुख्य वजह उर्वरकों का उचित प्रयोग न करना, खेती करते समय गलत तरीके अपनाना, भूमि का निरीक्षण न करवाना हैं। जिस वजह से बीते दस वर्षो से भारत में उर्वरकों की खपत में बढ़ोतरी हुई है और फसलों का उत्पादन (विशेषकर अनाज वाली) स्थिर रहने के बजाए, कम हो रहा है, जिसके कई कारणों में से एक मुख्य कारण भूमि का स्वास्थ कमजोर होना। उर्वरकों का उचित प्रयोग या संतुलित न होना भी है। इस लिए भूमि की उर्वरता को बनाए रखने के लिए हरी खाद के प्रयोग के साथ उर्वरकों का संतुलित प्रयोग होना बहुत आवश्यक है, तो इनका प्रयोग आवश्यकता अनुसार ही किया जाए। इस कारण भूमि में फसलों के लिए पोषक तत्वों की मात्रा में अत्याधिक कमी और भूमि के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में अनचाही तबदीलियां कुछ मुख्य समस्याएं है।

पोषक तत्वों की कमी :- कपास-गेहूं और धान-गेहूं हमारे राज्य के मुख्य फसली चक्र है। एक ही तरह के फसल चक्र की वजह से भूमि से भौतिक एवं रासायनिक गुणों में कई तरह के बदलाव आये हैं। कई क्षेत्रों में भूमि तले पानी के खराब होने के कारण प्रत्येक वर्ष धान की पौध की बुवाई से पहले खेत को तैयार करने से कई खेतों के जड़ क्षेत्र में एक सख्त स्तह के बन जाने के कारण धान के बाद उगाई जाने वाली फसल जैसे गेहूं में हवा और पानी के ठीक न होने की वजह से और नमक के जमाव के कारण फसल को नुकसान होता है। औसतन 130 क्विंटल दाने की पैदावार प्राप्त करने के लिए भूमि में लगभग 285 किलोग्राम नाइट्रोजन, 58 किलोग्राम फास्फोरस, 349 किलोग्राम पोटाशियम, 48 किलोग्राम गंधक, 656 ग्राम जिंक, 5120 ग्राम लोहा, 5750 ग्राम मैगनीज, 264 ग्राम तांबा, 360 ग्राम बोरोन और 26 ग्राम मोलीबडीनम जैसे तत्वों की खपत होती है। पंजाब से फसलों का घनसत्व 1960-61 में 126 प्रतिशत था, जो कि बढ़कर 2007-08 के मध्य तक 190 प्रतिशत से बढ़ गया है, जोकि सभी राज्यों से अधिक है। फसलों के अवशेषों और जैविक खाद के बहुत कम प्रयोग से भूमि में खुराकीय तत्वों की समस्या ओर भी गंभीर हो चुकी है। हमारे राज्य में प्रत्येक वर्ष लगभग 360 लाख पुआल और 40 प्रतिशत गेहूं की नाड़ को खेतों में ही जला दिया जाता है। इससे भूमि के खुराकीय तत्वों की क्षति होती है और साथ ही पर्यावरण भी प्रदूषित होता है, जिससे भूमि के गुणों पर भी बुरा असर पड़ता है। फसल चक्र में फलीदार फसलों के न होने के कारण और जैविक खाद के कम प्रयोग के कारण भूमि में हो रही अलग-अलग क्रियाओं पर भी बुरा असर पड़ता है। इस समय हमरे राज्य के कई खेतों में जिंक, लोहा, मैगनीज और गंधक की कमी की वजह से फसलों की पैदावार कम हो रही है।

संतुलित खाद का प्रयोग :- भूमि की उर्वरता शक्ति के अनुसार उसमें बोई जाने वाली फसलों के जीवन काल को पूरा करने के लिए और अधिक पैदावार लेने के लिए तत्वों को उचित समय, उचित तरीके और उचित मात्रा में प्रयोग करने को ही खाद का संतुलित प्रयोग करना कहा जाता है। इस संतुलित खाद कार्यक्रम को अपनाने से जहां फसलों की पैदावार बढ़ती है, वहीं उत्पादन के उच्च क्वालिटी के होने के साथ-साथ कृषि के खर्च में भी कमी आती है और पर्यावरण भी शुद्ध रहता है।

मनुष्य और पशुओं की तरह पौधे भी जीवित हैं और उनको अपने जीवन चक्र को पूर्ण करने के लिए मनुष्य द्वारा कई पदार्थो/तत्वों की आवश्यकता है। जिनमें से 16 छोटे-बड़े तत्वों का वैज्ञानिक शोध के अनुसार आवश्यकता का जिक्र किया गया है। बड़े तत्व वह तत्व है, जिनकी आवश्यकता फसलों को अधिक होती है और छोटे तत्व वह तत्व है, जिनकों फसलों द्वारा कम मात्रा में गृहण किया जाता है, लेकिन अहमीयत के तौर पर दोनों तत्वों का महत्व एक समान है। आज सघनीय कृषि के युग में मिट्टी के निरीक्षण से ज्ञात हुआ है, कि बीते कई वर्षो से भूमि की भौतिक रासायनिक अवस्था दिन-प्रति-दिन खराब हो रही है। इस लिए भूमि के अच्छे स्वास्थ्य के लिए, अधिक पैदावार और बढ़िया उत्पादन के लिए कुछ विशेष बातों का ध्यान रखना आवश्यक है और संतुलित खाद का प्रयोग करना चाहिए।

1. गोबर की सड़ी-गली खाद आदि का इस्तेमाल अधिक से अधिक करना चाहिए।
2. फसल चक्र भूमि और पानी की क्वालिटी के अनुसार बनाया जाना चाहिए।
3. फसल चक्र में फलीदार फसलों को अपनाने के प्रयत्न किए जाएं।
4. फसलों के अवशेषों को जलाने से गुरेज करना चाहिए।
5. खराब व दूषित पानी को सिंचाई के लिए प्रयोग न किया जाए।
6. भूमि और फसलों की आवश्यकता के अनुसार वर्ष में एक बार गहरी जुताई की जाए।

उपरोक्त काम करने के साथ-साथ पर्याप्त तत्वों की पूर्ति उर्वरकों द्वारा की जाती है। अधिकतर किसान नाईट्रोजन तत्व यूरिया खाद द्वारा, फास्फोर्स और पोटाश तत्व डी.ए.पी. खाद द्वारा या एन.पी.के. 12-32-16 खाद द्वारा फसलों को डालते है। जबकि कार्बन, हाईड्रोजन, आक्सीजन तत्व पर्यावरण से (हवा, पानी से) पौधों को मुफ्त में मिल जाते हैं। किसान भाईयों के खेतों में इन 6 बड़े तत्वों के इलावा दूसरे छोटे तत्वों की बहुत कमी पाई गई है। जिनकी आपूर्ति करने वाले तत्वों की जानकारी है और इनकी कमी की निशानीयां इस प्रकार हैं :

मैगनीज :- विशेषकर रेतली भूमि में धान गेहूं के फसल चक्र में मैगनीज की कमी देखी जाती है। जिस वजह से पुराने या बीच वाले पत्तों पर सलेटी पीले, भूरे धब्बे पड़ जाते हैं, जो बाद में गुलाबी रंग के हो जाते है। गेहूं में यह कमी पहले पानी से तीन दिन बाद दिखाई पड़ती हैं। कमी वाले क्षेत्रों में मैगनीज को सीधे तौर पर डालने के बजाए 0.5 प्रतिशत मैगनीज सल्फेट (30 प्रतिशत तत्व वाला) का मिश्रण बना कर 2-3 स्प्रे सप्ताह के अंतराल पर करना चाहिए।

जिंक :- जिंक की कमी भी धान और गेहूं के फसल चक्र वाली भूमि में अधिक देखी जाती है, जिस वजह से अनाज में भी जिंक की कमी आ जाती है और फिर जिंक की कमी पशुओं और मनुष्यों में भी आ जाती है। इसकी कमी से बीच वाले पत्तों पर लोहे के जंग जैसा पदार्थ आ जाता है। इसकी पूर्ति के लिए 20-25 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ के हिसाब से बुवाई के समय डालें। खड़ी फसल में कमी आने पर 2 प्रतिशत जिंक सल्फेट के मिश्रण का स्प्रे किया जा सकता है।

लोहा :- लोहे की कमी ऊपर वाले पत्तों पर दिखाई पड़ती है। इसकी कमी वाले पौधे के पत्तों की नाड़ियां हरी रहती है और पत्ते बीज से पीले हो जाते हैं। जो अधिक कमी की वजह से सफैद हो जाते हैं। लोहा भी भूमि में नहीं डालना चाहिए। इसकी पूर्ति के लिए 1 प्रतिशत सल्फेट का मिश्रण बना कर 2-3 स्प्रे करना चाहिए।

गंधक (सल्फर) :- सलफर की कमी गेहूं-धान फसल चक्र विशेष कर हल्की भूमि में देखी जाती है। इस की कमी से नए पत्तों का रंग पीला हो जाता है। जबकि पुराने पत्ते हरे रहते। गेहूं की फसल में बारिश के मौसम में बादलों की छांया होने के दौरान इस की कमी बढ़ जाती है। यह तत्व तिलहन फसलों की पैदावार पर बुरा प्रभाव डालता है, इस तत्व की पूर्ति के लिए भूमि में बुवाई के समय एक से डेढ़ क्विंटल जिप्सम प्रति एकड़ डाल देना चाहिए।

गन्ने के मुख्य कीटों का एकीकृत प्रबंधन

ऋषिपाल, प्रक्षेत्र पर्यवेक्षक जैविक नियंत्रण प्रयोगशाला; वाई.पी.मलिक, सह प्रध्यापक चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय–कानपुर, उ.प्र. एवं सी.एस. प्रसाद, सरदार प्रध्यापक (कीट विज्ञान विभाग), वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय–मेरठ

गन्ना भारत की एक नगदी फसल है। उत्तर भारत में दक्षिण भारत की तुलना में औसत उपज कम होती है। पैदावार में कमी के लिए नाशी कीट प्रमुख कारण है। गन्ने की फसल में 200 से अधिक कीट नुकसान पहुंचाते है, लेकिन इनमें से एक दर्जन के लगभग कीट अधिक हानिकारक है, जो गन्ने के विभिन्न भागों को नुकसान पहुंचाकर गन्ने के उत्पादन में 15–20 प्रतिशत व चिनी के उत्पादन में कमी कर देते है। इस लेख में गन्ने की फसल का अच्छा उत्पादन लेने के लिए विभिन्न कीटों, दीमक, व्हाईट ग्रब्स, जड़ बेधक, अगोला चोटी बेधक, अंकुर बेधक, तना बेधक, प्ररोह बेधक, पोरी बेधक, गुरदासपुरा बेधक, पाइरिला कालाचिकटा आदि की पहचान व एकीकृत प्रबंधन के विषय में विस्तार से उल्लेख किया गया है।

गन्ना भारत वर्ष की प्रचीनतम फसल है। प्राचीन भारतीय साहित्य अथर्ववेद, रामायण, भगवतगीता, चाकसहिता आदि में इसका उल्लेख मिलता है। हमारे सकल घरेलू उत्पादन का लगभग 2 प्रतिशत भाग शक्कर उद्योग का है। भारत शर्करायुक्त फसलों में गन्ना प्रमुख है।

गन्ने में लगने वाले प्रमुख कीट :

दीमक (ओडोन्टोटर्मिस ओबेसेस) :– दीमक फसल के विकास की दो अवस्थाओं में आक्रमण करती है। प्रथम इस कीट का प्रकोप श्रमिक दीमक गन्ने की बुवाई के बाद गन्ने के टुकड़ों के कटे सिरों एवं टुकड़ों पर उपस्थित आंखों पर आक्रमण करके क्षति पहुंचाते है। फलस्वरूप अंकुरण कम होता है, जड़ों को भारी क्षति पहुंचाती है और पौधों की संख्या में कमी आने से पौधों की पत्तियां पीली पड़कर सूख जाती है एवं पिथ के स्थान पर मिट्टी भर जाने के कारण फसल के उत्पादन में भारी कमी आती है। दीमक का दूसरा आक्रमणं वर्षा ऋतु के बाद सितंबर–अक्तूबर के महीने में सबसे अधिक होता है।

प्रबंधन :

1. प्रभावित खेत में सिंचाई समय–समय पर करते रहे।

2. खेत में हमेशा भलीपूर्वक गोबर की सड़ी हुई खाद का प्रयोग करें।

3. 1 कि.ग्रा. बिवेरिया तथा 1 कि.ग्रा. मैटारिजयम को लगभग 25 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद में अच्छी तरह मिलाकर छाया में 10 दिन के लिए छोड़ दें, प्रभावित खेत में तदोउपरांत प्रति एकड़ बुवाई से पूर्व इसका प्रयोग करें।

4. सिंचाई के समय इंजन से निकले हुए तेल की 2–3 ली. मात्रा का प्रयोग करें।

5. प्रकोप अधिक होने पर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. की 3–4 ली मात्रा को बालू रेत में मिलाकर प्रति हैक्टेयर में प्रयोग करें।

6. गन्ने की कांची को बुवाई से पूर्व इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यू. एस. 0.1 प्रतिशत से उपचारित कर लेना चाहिए।

व्हाईट ग्रब (होलोट्राईकेया कोनसेनजिनिया) :– इस कीट की सुंडी व वयस्क दोनों ही अवस्था बहुभक्षी स्वभाव की होती है। इस कीट की सुंडी भूमि के अंदर रहती है और गन्ने की जीवित पौधों की जड़ों को खाती है, सुंडी द्वारा जड़ को काट देने से पूरा पौधा पीला पड़कर सूखने लगता है। ऐसे सुंडी, ग्रसित पौधे को उखाड़ने पर आसानी से मिट्टी के बाहर आ जाते है। सुंडी के अधिक प्रकोप होने की अवस्था में गन्ने की सम्पूर्ण फसल नष्ट हो जाती है। मादा वयस्क कीट संभोग के 3–4 दिन पश्चात गीली मिट्टी में 10 सै.मी. गहराई में अंडे देना प्रारंभ करती है। एक मादा औसतन 10–20 अंडे देती है। अंडों से 7 से 13 दिन के पश्चात छोटी सुंडी निकलती है, जिसे प्रथम अवस्था सुंडी कहते है। सुंडी की प्रथम अवस्था लगभग 2 सप्ताह तक रहती है, तत्पश्चात यह द्वितीय अवस्था में आ जाती है, जिसकी औसतन लंबाई 35 मि.मी. होती है। लगभग 4–5 सप्ताह के पश्चात तृतीय अवस्था में परिवर्तित हो जाती है, जिसकी औसतन लंबाई 41 मि.मी. होती है तथा तृतीय अवस्था लगभग 6–8 सप्ताह की होती है। इस कीट की द्वितीय व तृतीय सुंडी अवस्थायें पौधों की बड़ी जड़ों को काटती है, इस प्रकार सुंडी का पूर्ण समयकाल लगभग 12–15 सप्ताह का होता है। यह जुलाई से मध्य अक्तूबर तक पौधों की जड़ों को खाती है।

प्रबंधन :

1. सफैद सुंडी से फसलों को बचाने के लिए वयस्क नियंत्रण सबसे सस्ता व दूरगामी प्रभाव वाला उपाय है। मौनसून या मौनसून पूर्व पहली अच्छी बारिश के पश्चात इस कीट के वयस्क सूर्यास्त के बाद प्रतिदिन भूमि से बाहर निकलते हैं और शाम के समय जब सूर्य का प्रकाश मंद हो जाता है, तब वयस्क आस–पास के पोषी वृक्षों पर बैठते है और सारी रात पत्तियों को खाते है। इस लिए कीटनाशक का छिड़काव इसी समय करना चाहिए। पोषी वृक्षों पर मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. की 0.05 प्रतिशत या कार्बारिल 50 डब्ल्यु.पी. की 0.2 प्रतिशत या क्विनलफॉस 25 ई.सी. की 0.05 प्रतिशत मात्रा का छिड़काव करें।

2. वयस्क कीट प्रकाश प्रपंच के उपर भारी संख्या में आकर्षित होते देखे जा सकते हैं। इसके लिए मई के अंत में जैसे की पहली बरसात हो जाय, तथा वयस्क निकलना शुरू हो प्रकाश प्रपंच लगा देना चाहिए।

3. फसल बुवाई वाले खेत में फसल चक्र अपनायें। फसल चक्र में धान की फसल को जरूर अपनायें।

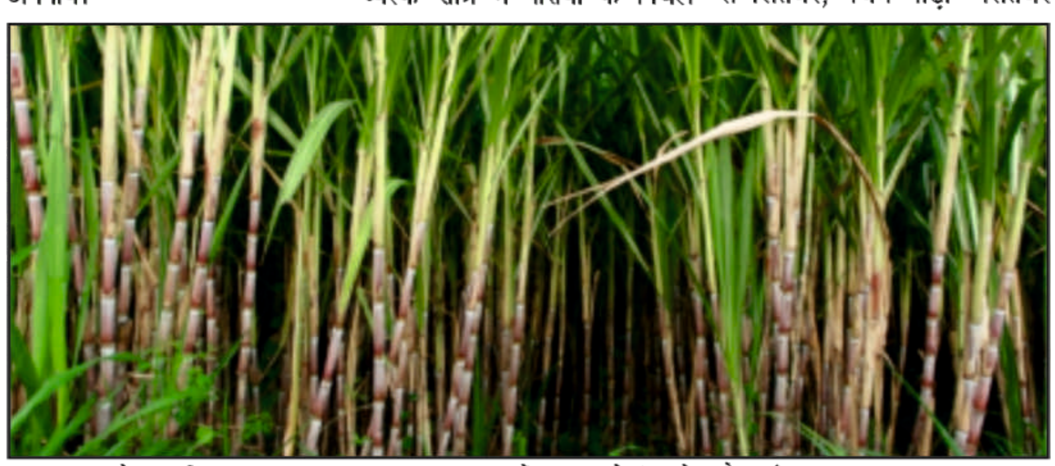

4. खेत की सुबह–सुबह गहरी–जुताई करके छोड़ दें, ताकि पक्षी कीटों को खा सकें। अत: दो से तीन ग्रीष्मकालीन जुताई विभिन्न हानिकारक कीटों के अंडों व अन्य अवस्थाओं को खाकर उनकी संख्या को कम कर देते है।

5. खेत की जुताई ऐसे यंत्रों से ना करें, जिसमें जुताई के साथ–साथ पाटा लगता हो या पाटा लगाने वाले यंत्र में 4–5 इंच की कीलें लगी हो ताकि कीलें सुंडी को काट सके।

6. सिंचित अवस्था में मौनसून से पूर्व फसल की बुवाई कर देनी चाहिए, जिससे फसल की जड़ों को काटने में सुंडी असमर्थ हो।

7. जीवाणु, बैसिलस पोपिली द्वारा वयस्क कीट को नियंत्रित किया जा सकता है। गन्ने की बुवाई ये पूर्व ब्युवेरिया ब्रोंगनियार्टी की 1.0 कि.ग्रा. तथा 1.0 कि. ग्रा. मैटारायजियम एनसोप्ली को लगभग 50 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद में अच्छी तरह मिलाकर छाया में 10 दिन छोड़ दें व प्रभावित खेत में तदोपरान्त प्रति एकड़ बुवाई पूर्व प्रयोग करें।

8. सूत्रकृमि के पाउडर या घोल के फार्मुलेशन से बनाये गये घोल को $2.5–5\times10^9$ आई.जे. प्रति हैक्टेयर की दर से गन्ने की सिंचाई के साथ कीटों के प्रयोग से पूर्व खेत में प्रयोग करने पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

9. कीटनाशी रसायन क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी., क्विनलफॉस 25 ई.सी. व इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. द्वारा गन्ने के बीज उपचारित करके नियंत्रण किया जा सकता है।

10. गन्ना बोने से पूर्व दानेदार कीटनाशी रसायन फोरेट 10 जी. 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से भूमि उपचारित करके नियंत्रण पाया जा सकता है।

जड़ बेधक (इमलोसेरा डपरीसेला) :– सुंडी हल्के पीले रंग की लगभग 2 मि.मी. लंबी होती है। व्यस्क कीट भूरे से रंग का 17 से 20 सै.मी. लंबाई तथा पंख विस्तार 27 मि.मी. होता है। व्यस्क रात्रि में पत्तियों के निचले भाग पर तथा तनों पर हल्के रंग के चपटे अंडे देती है। अंडे झुंड में अलग–अलग होते है। अंडे मार्च के अंतिम सप्ताह या अप्रैल के प्रथम सप्ताह में दिये जाते है। लगभग 4–5 दिन में अंडे फुटते है। सुंडी पौधे के भूमि के अंदर वाले भाग पर आक्रमण करके घुसती है, यह पौधों को छोटी अवस्था में ही क्षति पहुंचाती है। जिससे केन्द्रीय पर्ण चक्र सूख जाता है। मृत केन्द्र को खीचा जाये तो नीचे से पूरा पौधा टुट जाता है, यही इसकी पहचान है। जिससे केन्द्रीय पर्ण चक्र सूख जाता है। मृत केन्द्र को खीचा जाये, तो निचे से पूरा पौधा टूट जाता है, यही इसकी पहचान है। बाहर से सुंडी के घुसने का निशान नही दिखता। तने पर लिपटी पत्ती पर अंदर की ओर खाये जाने का कोई चिन्ह नही पाया जाता है। ग्रसित पौधों का सूखी मध्य कलिका सुगमता से खिचीं नही जा सकती तथा उससे किसी प्रकार की दुर्गन्ध भी नही आती। इसके द्वारा सर्वाधिक क्षति मई से जुलाई के महीने तक होती है।

अगोला चोटी बेधक (सिरफोफेगा निवेला) :– इस कीट का पतंगा सफैद रंग का होता है। इसके पतंगे रात्रि में सक्रिय एवं दिन में छिपे रहते है। मादा पत्ती नीचे कि सतह पर अंडे देती है तथा अंडे पीले या बादामी बालों से ढके रहते है। एक मादा जीवन काल में लगभग 500 अंडे देती है। अंडों से सुंडी 6–7 दिन के अंदर निकलती है। सुंडी अवस्था 20–25 दिन रहती है। इसके पश्चात प्यूपा बनता है। अंडा फूटने के बाद सुंडी पहले पत्ती में मोटे सिरे पर छेद कर खाते हुए बढ़वार बिंदु तक पहुंच जाती है। फिर सुंडी अगोला झुंड़ के बीच आक्रमण करती है, अगोला के बीच में 'म्रत गोभ' डेड हर्ट बन जाता है।। म्रत गोभ को तोड़ा जाए, तो उससे दुर्गन्ध आती है। जुलाई माह में तीसरी पीढ़ी द्वारा आक्रमण होने पर बढ़वार रूक जाती है तथा बराबर से छोटी–छोटी शाखाएं निकलती है, जिसे 'बन्ची टॉप' कहते है, बन्ची टॉप तीसरी चौथी पीढ़ी में पाया जाता है। फलस्वरूप पौधों की बढ़वार रूक जाती है तथा पैदावार कम मिलती है। इस कीट का प्रकोप मार्च से शुरू होकर नवंबर तक रहता है। लेकिन तीसरी पीढ़ी सबसे अधिक नुकसान पहुंचाती है।

विभिन्न पीढ़ियों के प्रकोप का समय इस प्रकार है :

प्रथम पीढ़ी – मार्च से मई, द्वितीय पिढ़ी– मई से जून, तृतीय पीढ़ी– जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई तक, चतुर्थ पीढ़ी– जुलाई से सितंबर, पंचम पीढ़ी– सितंबर से नवंबर

अंकुर बेधक (काइलो इनुफस्कैटेलस) :

अर्ली शूट बोरर :– सुंडी पीली अथवा भूरे रंग की होती है। व्यस्क रात्रि में पत्तियों के निचले भाग पर तथा तनों पर हल्के पीले रंग के चपटे अंडे देती है। अंडे झुंड में अलग–अलग होते है। अंडे मार्च के अंतिम सप्ताह या अप्रैल के प्रथम सप्ताह में दिये जाते है। लगभग 4–5 दिन में अंडे फूटते है। सुंडी पौधे के भूमि के अंदर वाले भाग पर आक्रमण करके घुसती है, यह पौधों को छोटी अवस्था में ही क्षति पहुंचाती है। जिससे केन्द्रीय पर्ण चक्र सूख जाता है। मृत केन्द्र

शेष पृष्ठ 6 पर

खेती की लागत कम करने के उपाय

खेती को लाभदायक बनाने के लिए दो ही उपाय हैं – उत्पादन को बढ़ाएं एवं लागत खर्च को कम करें। कृषि में लगने वाले मुख्य आदान हैं बीज, पौध पोषण के लिए उर्वरक व पौध संरक्षण, रसायन और सिंचाई। खेत की तैयारी, फसल कटाई-गहाई-उड़ावनी आदि। कृषि कार्यों में लगने वाली ऊर्जा की इकाईयों का भी कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण स्थान है। इनका उपयोग किया जाना आवश्यक है, परन्तु सही समय पर सही तरीके से किए जाने पर इन पर लगने वाली प्रति इकाई ऊर्जा की क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। इनका अपव्यय रोक कर व पूर्ण या आंशिक रूप से इनके विकल्प ढूंढ कर भी लागत को कम करना संभव है। इस दिशा में किए गए कार्यों व प्रयासों के उत्साहजनक परिणाम प्राप्त हुए हैं। इनसे कृषकों को अधिक लाभ मिलने के साथ ही पर्यावरण को प्रदूषित होने से भी बचाया जा सकता है।

पौध पोषण : पौध पोषण के लिए बाज़ार से खरीदे गए नत्रजन, स्फुर और पोटाश युक्त उर्वरक उपयोग में लाए जाते हैं। प्रयोगों में पाया गया है कि रासायनिक उर्वरक के रूप में दी गई नत्रजन (जो यूरिया, अमोनियम सल्फेट आदि के द्वारा दी जाती है) का सिर्फ 33-38 प्रतिशत भाग ही उस फसल को प्राप्त हो पाता है। शेष सिंचाई जल के साथ नाइट्रेट्स के रूप में रिस कर या कम नमी की अवस्था में गैसीय रूप में वातावरण में चला जाता है। इसी तरह स्फुर यानी फास्फोरस का 20 प्रतिशत अंश तक काली चिकनी मिट्टी के कणों के साथ बांध कर पौधों को उपलब्ध नहीं हो पाता। इन उर्वरकों की मात्रा को कम करने एवं उपयोग क्षमता को बढ़ाने में जीवांश खाद जैसे गोबर की खाद या कम्पोस्ट या केंचुआ खाद आदि का प्रयोग लाभदायक पाया गया है। ये जैविक खाद किसान अपने स्तर पर भी तैयार कर सकते हैं। इनके अलावा अखाद्य तेलों जैसे नीम, करंज आदि की खली का उपयोग किया जा सकता है। इन खलियों के चूरे की परत यूरिया के दाने पर चढ़ा कर यूरिया के नत्रजन को व्यर्थ नष्ट होने से बचाया जा सकता है। नत्रजन वाले उर्वरकों की निर्भरता को कम करने के लिए जीवाणु कल्चर, राइजोबियम या एजोटोबैक्टर का उपयोग, गेहूं, ज्वार, मक्का, कपास आदि फसलों के साथ अंतरवर्तीय फसल के रूप में चना, गेहूं, उड़द, अरहर, चौला आदि का उपयोग लाभदायक पाया गया है। ये दलहन वर्गीय फसलें वातावरण की नत्रजन को लेकर ना सिर्फ अपने उपयोग में लाती है, बल्कि अपनी जड़ों में स्थिर नत्रजन का लाभ साथ लगाई गई अंतरवर्ती को भी पहुंचाती है। स्फुर (फास्फोरस) की उपयोग क्षमता को बढ़ाने के लिए स्फुर घोलक बैक्टीरिया का उपयोग किया जाना चाहिए। अपने यहां अभी भी गोबर का उपयोग उपले या कंडे बना कर ईंधन के रूप में किया जाता है। यदि इसे गोबर गैस में परिवर्तित कर सकें तो ईंधन की समस्या हल होने के साथ ही बेहतर गुणवत्ता का खाद भी प्राप्त हो जाता है। गांव में पशुओं की संख्या के आधार पर गोबर गैसों के निर्माण, रख-रखाव की जिम्मेदारी ग्राम पंचायतों को सौंपी जा सकती है। गेहूं की फसल की कटाई के बाद खेतों को आग लगा कर साफ किया जाता है। इससे भारी मात्रा में जीवांश जल कर नष्ट हो जाता है। इसे जलाने के बाद फसल की कटाई के तत्काल बाद मिट्टी पलटने के हल से खेत को जोत कर ढेलेदार अवस्था में छोड़ दिया जाना चाहिए, जिससे कटे हुए पौधों के डंठल, ठूंठ आदि निचली सतह में जाकर मिट्टी से दब जाएं और वर्षा आने पर स्वत: विघटित होकर जीवांश खाद बन जाते हैं। फसलों में सिंचाई जल का उपयोग क्षमता बढ़ाने के लिए एक नाली छोड़ कर एकांतर (अल्टरनेट) सिंचाई करना, स्प्रिंकलर (फुहार) सिंचाई, टपक सिंचाई आदि विधियों व साधनों का प्रयोग फसल की कतारों के बीच अवरोध परत (मल्च) का उपयोग आदि तरीके काम में लाए जाने चाहिए।

पौध संरक्षण : रोगों और कीटों की बहुतायत आधुनिक और लगातार कृषि की देन है। हमारा लक्ष्य फसलों को इनके द्वारा की जाने वाली हानि से बचाना है, ना इनके द्वारा की जाने वाली हानि से बचाता है, ना कि नष्ट करना। कीट व रोग नाशक रसायनों का असर सिर्फ नुकसान करने वाले कीटों व रोगों पर ना होकर लाभ पहुंचाने वाली कीटों व रोगों पर भी होता है।

इनके नियंत्रण के लिए स्वच्छ कृषि, परजीवी व शिकारी कीटों व कीटों को हानि पहुंचाने वाले कवकों (फफूंदों) व वायरस का प्रयोग असरकारक पाया गया है। इनके अलावा नीम, करंज, हींग, लहसुन, अल्कोहल आदि के उपयोग, अंतवर्ती फसल, प्रपंची फसल फेरोमेन, ट्रेप, प्रकाश प्रपंच आदि साधनों के उपयोग से रसायनों के उपयोग पर खर्च होने वाली राशि में कमी की जा सकती है। कीटनाशी रसायन अंतिम विकल्प के रूप में काम में लाएं।

स्वयं तैयार करें बीज : आजकल संकर बीजों का अधिक प्रचलन है। इन्हें हर साल बाज़ार से खरीदना पड़ता है। इनकी उत्पादन क्षमता सामान्य किस्मों की अपेक्षा अधिक होती है, परन्तु अनेक फसलों और सब्जियों में पौध प्रजनकों द्वारा ऐसी किस्में भी तैयार कर ली गई हैं, जो संकर किस्मों के लगभग समान (करीब 8-10 प्रतिशत) कम उत्पादन देती हैं।

शेष पृष्ठ 2 की

फसलों का सच्चा मित्र है ट्राईकोडर्मा

* ट्राईकोडर्मा उपचारित बीज को धूप में न रखें।

* इससे उपचारित गोबर की खाद को ज्यादा समय तक न रखें।

ध्यान देने योग्य बिंदु :

* कल्चर में पर्याप्त मात्रा में सी.एफ.यू. (कॉलोनी फार्मिंग यूनिट) होनी चाहिए।

* सही समय पर ट्राइकोडर्मा का उपयोग करें, जिससे हानिकारक फफूंद को यह समय से रोक सकें।

* कल्चर का फसल पर सही असर कल्चर उत्पादन तिथि

से छ: महीने के अंदर उपयोग करने पर होता है।

* आधुनिक कृषि पद्धति में किसान फसलों में मृदाजनित व बीजजनित रोगों की रोकथाम के लिए केवल रासायनिक फफूंदनाशक दवाओं पर ही निर्भर हैं। विभिनन प्रकार की समस्यायें जैसे प्रदूषण इससे लगातार एक ही फफूंदनाशक दवा के उपयोग से रोगनाशकों में उसके प्रति प्रतिरोधक क्षमता और उत्पादन लागत में वृद्धि आदि उत्पन्न होती हैं। फसलों में होने वाले रोगों की रोकथाम के लिए रासायनिक फफूंदनाशकों के साथ-साथ जैव फफूंदनाशकों का भी उपयोग करें, जो न केवल हमारे स्वास्थ्य व पर्यावरण के लिए सुरक्षित है, बल्कि आर्थिक दृष्टिकोण से भी लाभदायक है।

ट्राईकोडर्मा के प्रयोग से लाभ :- * यह आसानी से बाजार में उपलब्ध है।

* यह समंवित रोग प्रबंधन के लिए आदर्श साधन हैं।

* इसकी प्रयोग विधि आसान है।

* यह पर्यावरण मित्र है।

* इसका प्रयोग जैविक खाद के साथ किया जा सकता है।

* फफूंदीनाशक रसायनों की तुलना में इस पर कम खर्च आता है।

* यह पौधे की बढ़वार में सहायक है, जिससे उत्पादन में भी वृद्धि होती है।

* एक बार प्रयोग करने पर काफी लंबे समय तक इसका प्रभाव रहता है।

* यह कई फफूंदजनित रोगजनकों के खिलाफ कार्य करता है।

* यह सभी जगह में पाया जाता है।

शेष पृष्ठ 5 की

गन्ने के मुख्य कीटों का एकीकृत प्रबंधन

को आसानी से नहीं खीचा जा सकता, यही इसकी पहचान है। बाहर से सुंडी के घुसने का निशान नहीं दिखता। क्षेत्रीय भाषा में इसे 'कनसवा भी कहते है। प्रभावित गोफ में सिरके जैसी बदबू आती है।

तना बेधक (किइलो इनफस्केटेलस) :- व्यस्क कीट भूरे रंग का होता है। मादा कीट पहली-दूसरी और तीसरी पत्ती की निचली सतह में रात्रि के समय अंडे देती है। जून माह में वर्षा इसके लिए उपयोगी होती है। जून के अंतिम सप्ताह से मादा कीट अंडें देना शुरू कर देती है। लगभग 6-7 दिन में अंडें फूटते हैं। इस कीट की सुंडी भूमि की सतह के सहारे से गन्ने के पौधे में छेद करके तने के अंदर मुलायम तन्तुओं को खाते हुए नीचे से ऊपर तक सुरंग बनाती है। जिसके कारण मध्य कल्किाये सूख जाती हैं और

'डेड हर्ट' बन जाता है, जो कि खिंचने से आसानी से निकल आता है। फसल पर इस कीट की उपस्थिति पौधों के छिद्रों तथा 'डेड हर्ट' की दुर्गन्धि से मालूम पड़ जाती है। इसका अधिक प्रकोप होने पर काफी अधिक आर्थिक क्षति उठानी पड़ती है। इसके 'डेड हर्ट' की विशेषता यह होती है, कि मध्य की अविकसित पत्तियों को छोड़कर शेष सभी पत्तियां हरी रहती हैं।

प्ररोह बेधक (काइलो यूरीसिलस) :- यह कीट मार्च से नवंबर तक सक्रिय रहता है। पतंगा रात्रि में सक्रिय रहता है तथा मादा पतंगा सफैद अंडें गुच्छों में देती है। 6-9 दिन में अंडे फूटते है। 3-4 सप्ताह में सुंडी पूर्ण विकसित होकर तने के अंतर प्यूपा बनाती है। एक वर्ष में इसकी 4-5 पीढ़ीयां पायी जाती है। इसकी सुंडी पौधे के आधार पर तने में छेद करती है। इसके आक्रमण से प्ररोहों के केन्द्रीय पर्ण चक्र में क्षति होती है, जिससे पूरा प्ररोह सूख जाता है।

वैज्ञानिक तकनीक द्वारा सब्जियों का नर्सरी उत्पादन

सब्जियों की पौध तैयार करना सब्जी उगाने वाले जमींदार के लिए एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। सब्जियों की खेती में पौधशाला या नर्सरी में पौध तैयार करना एक कला है। पौध उगाने की आधुनिक विधि का प्रयोग करके किसान भाई अच्छी आमदनी व खेती कर सकते है। सब्जियों की नर्सरी को अब मौसम और बेमौसम की अवस्थाओं में वैज्ञानिक विधि से पॉलीहाऊस में

सफलतापूर्वक तैयार किया जा सकता है। इन्हें उगाने के लिए उत्तम प्रबंधन के साथ-साथ कुछ अन्य और बातें है, जिन्हें अपनाकर मुनाफे की खेती की जा सकती है।

सब्जियों की खेती को दो प्रकार से उगाने की प्रक्रिया है। पहली में सब्जियों के बीजों को सीधा खेत में बो दिया जाता है। जैसे मटर, भिंडी, गाजर, मूली, शलगम, बेल वाली सब्जियां, पत्ते वाली सब्जियां तथा सेम, लोबिया, फ्रेंचबीन इत्यादि। दूसरी विधि में

पहले बीजों को नर्सरी में बिजाई करके पौध तैयार की जाती है और बाद में उसकी खेत में रोपाई की जाती है, जैसे फूलगोभी, पत्तागोभी, ब्रोकोली, टमाटर, मिर्च, बैंगन, शिमला मिर्च, प्याज तथा गांठगोभी इत्यादि।

साधारण मौसम में तो सब्जियों की नर्सरी खुले वातावरण में तैयार की जा सकती है। परन्तु वातावरण में अत्यधिक गर्मी व सर्दी होने पर खुले में पौध तैयार नहीं की जा सकती है। इसके लिए आधुनिक तकनीक को अपनाकर गर्मी में पॉलीहाऊस में वातावरण नियंत्रित विधि (फैन व पैड) से व सर्दी में तापमान को बढ़ाकर पौध उगाने की प्रक्रिया को उच्च तकनीक या हाइटेन विधि कहते है, इस प्रक्रिया को अपनाकर बेमौसम में भी सफलतापूर्वक सब्जियों की पौध उगाई जा सकती है।

देश के उत्तरी क्षेत्र के भागों में मिर्च की अगेती और मध्यम मौसम की फसल की पौध तैयार करते समय वातावरण में अधिक गर्मी के साथ-साथ बारिश का भी समय होता है। जिससे कि पौधशाला में आर्द्रगलन रोग फैलने के कारण बहुत सारी मात्रा में पौध खराब हो जाती है। इसी प्रकार नवंबर-दिसंबर के महीनों में बसन्तकालीन पौध को तैयार करते समय वातावरण में कम तापमान होने के कारण बीज का जमाव कम व देरी से होता है और बढ़वार भी धीरे-धीरे होती है, जिससे कि पौध को तैयार करने में काफी समय लगता है। इस समय में पौध को पॉलीहाऊस में उगाकर समय से तैयार किया जा सकता है।

नर्सरी में पौध उगाने के लाभ :

1. नर्सरी का क्षेत्र कम होने के कारण पौध की उचित देखभाल की जा सकती है।
2. पौध की बढ़वार के लिए उचित वातावरण का होना।
3. सब्जियों का बीज काफी महंगा होने के कारण एक-एक पौधे की देखभाल जरूरी ।
4. पौधशाला का क्षेत्र छोटा होने के कारण आसानी से बीमारियों व कीटों से बचाव।
5. पौध क्षेत्र छोटा होने के कारण मेन खेत में तैयार करने में आसानी।
6. बेमौसम में पौध तैयार करके अगेती फसल ली जा सकती है। जिससे कि अधिक मुनाफा कमाया जा सकता है।

नर्सरी तैयार करने के लिए उचित मात्रा :

1. नर्सरी को हमेशा ऊंचे स्थान पर लगाना चाहिए, जिससे कि उसमें पानी खड़ा न हो सके और फालतू पानी को निकाला भी जा सके।
2. पानी के स्त्रोत के पास होनी चाहिए।
3. नर्सरी का क्षेत्र खुला हवादार, छाया रहित होना चाहिए।
4. पौधशाला की मिट्टी बढ़िया दोमट और पी.एच. मान 6-7 के बीच होना चाहिए।
5. नर्सरी को खेत के एक कोने में तैयार करना चाहिए। जिससे कि मेन खेत को तैयार करने में बाधा न हो।

सब्जियों की स्वस्थ व सुदृढ़ पौध तैयार करने के लिए महत्वपूर्ण बाते :

1. किस्मों का चुनाव :- क्षेत्रों के अनुसार तथा समय के अनुरूप अगेती, मध्यम व पछेती किस्मों का चुनाव करें।

2. बीजोपचार :- नर्सरी में बीज को बोने से पहले उसको उपचारित करना चाहिए, ताकि बीज जनित बीमारियों से पौध मुक्त रहे। सब्जियों के बीज को मुख्यत: 2 ग्राम कैप्टान, थाइरम या बाविस्टिन प्रति किलो के हिसाब से उपचारित करना चाहिए, क्योंकि कुछ बीमारियां ऐसी है, जिनको बीज उपचार विधि से ही रोका जा सकता है और ये सस्ता भी है। यदि बीज को उपचारित नहीं किया तब बाद में बीमारियों को नहीं रोका जा सकता।

3. क्यारियां तैयार करना :- सब्जियों की पौध की नर्सरी के लिए क्यारियों में बुवाई की जाती है। साधारणया 3×1 मीटर लंबाई व चौड़ाई की क्यारियां बनाई जाती हैं, क्यारियों के बीच में एक फीट का रास्ता छोड़ा जाता है, जिससे कि क्यारियों में से खरपतवार निकालने व अन्य सस्य क्रियाओं में आसानी रहती है। गर्मी की पौध को समतल स्थान पर, बारिश में भूमि से 10-15 सै.मी. ऊपर व सर्दी की फसल की पौध धंसी (नीची) हुई क्यारियों में तैयार की जाती है, जिससे कि पौधों को पाला व सर्दी से बचाया जा सके।

4. खाद एवं उर्वरक :- तीन मीटर लंबी एवं 1 मीटर चौड़ी नर्सरी की एक क्यारी के लिए 10 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 100 ग्राम यूरिया व 150 ग्राम डी.ए.पी. तथा 120 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश को नर्सरी बोने से पहले मिट्टी में अच्छे से मिलाकर खेत तैयार कर लेते हैं।

5. क्यारियों का उपचार व बुवाई :- नर्सरी में पौध को रोगों से बचाने के लिए क्यारियों की मिट्टी का उपचार करना भी आवश्यक है। बुवाई से एक दिन पहले नर्सरी की एक क्यारी में 20-25 ग्राम बाविस्टन/कैप्टन दवाई को अच्छी तरह से मिट्टी में मिला देते है। वर्षा ऋतु में फारमेल्डीहाइड नामक रसायन का एक भाग 80-100 भाग पानी में मिलाकर क्यारियों में डालना चाहिए। दवाई का यह घोल मिट्टी में 10-12 सै.मी. गहराई तक जाना चाहिए और बाद में प्लास्टिक शीट से ढक देना चाहिए, ताकि रसायन की गैस बाहर न निकल सके। दो दिन बाद प्लास्टिक शीट को हटा देना चाहिए और इसके तीन दिन बाद मिट्टी में से रसायन की गंध समाप्त होने पर खुदाई करके बीज बोना चाहिए।

बीज की बुवाई 1-2 सै.मी. गहराई पर 5-10 सै.मी. की दूरी पर नालियां/कतारों में करें। छोटे बीजों की गहराई कम वह बड़े बीजों की गहराई ज्यादा रखते है। बुवाई के बाद गोबर की बारीक खाद की एक पतली परत से ढक देते है। इसको दुबारा से 2 ग्राम/कि.ग्रा. गोबर की खाद की दर से कैप्टान दवाई ऊपर डालते है, ताकि गोबर की खाद के अंदर मौजूद

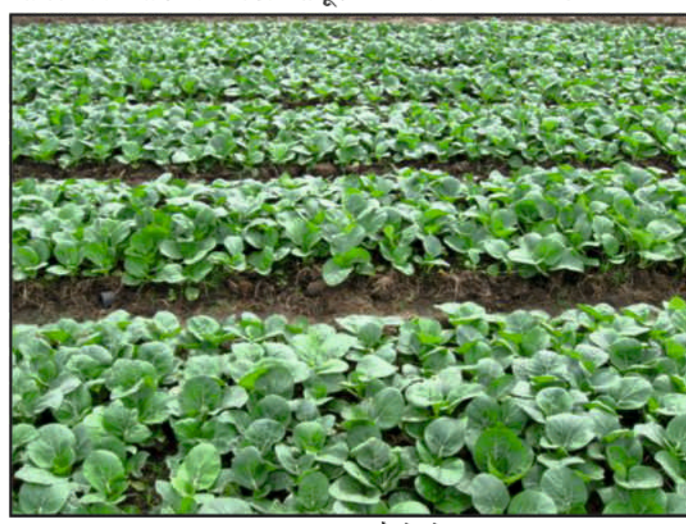

बीमारियां व कीट मर जाएं और सिंचाई शाम को फव्वारे से करें। सर्दियों में पौध 5-6 सप्ताह में तथा गर्मियों में 4 सप्ताह में तैयार हो जाती है।

6. नर्सरी की देखभाल :- बीज के अच्छे जमाव के लिए नमी की उचित मात्रा होनी चाहिए। जब तक बीज अंकुरित ना हो, पानी प्रतिदिन फव्वारे से डालें। क्यारियों में से खरपतवार निकालते रहें। गर्मी, तेजधूप व गर्म हवा से बचाने के लिए नर्सरी को घास-फूस या सरकंडे के छप्पर से ढक दें। सर्दी के मौसम में सफैद पॉलीथीन शीट से ढकना चाहिए। कीटों का प्रकोप होने पर कीटनाशक दवा जैसे मैलाथियान 50 ई.सी. का 1.5-2 मि.ली./लीटर पानी का घोल बनाकर 10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

7. पौध रोपण :- नर्सरी में पौध की लंबाई जब 10-15 सै.मी. या 4-6 पत्तियां निकल आएं, तो खेत में लगाने के लिए तैयार होती है। पौध को खेत में लगाने से एक सप्ताह पहले पानी की सिंचाई बंद कर दें, जिससे कि पौधों में प्रतिकूल वातावरण सहन करने की शक्ति बढ़ जाती है। पौध उखाड़ने से 1 दिन पहले फव्वारे से हल्का पानी डालें ताकि पौध उखाड़ते समश जड़ें न टूटे। पौध रोपण हमेशा शाम के समय करें ताकि रात में पौधे आसानी से ठंडक में स्थापित हो जाए और रोपाई के बाद खेत में हल्की सिंचाई करें।

नीली क्रांति फतेहगढ़ साहिब ज़िले में आर्थिक रूप से मज़बूत आधार तैयार कर रही

फतेहगढ़ साहिब के सरकारी मछली फार्म में 1.27 करोड़ पोंग मछलियां उत्पादित

पंजाब सरकार किसानों और अन्य जरूरतमंद लोगों की आर्थिक स्थिति को और मज़बूत करने के उद्देश्य से सहायक व्यवसायों को प्रोत्साहित कर रही है। इसी कड़ी के तहत फतेहगढ़ साहिब ज़िले में मछली पालन के पेशे की ओर रुझान बढ़ाने के लिए विभागीय अधिकारियों द्वारा निरंतर प्रयास किए जा रहे हैं। इन प्रयासों की बदौलत ज़िले में नीली क्रांति का रास्ता आर्थिक रूप से मज़बूत आधार विकसित करने का माध्यम बन रहा है। यह जानकारी देते हुए डिप्टी कमिश्नर डॉ. सोना थिंद ने बताया कि पिछले वित्त वर्ष के दौरान 121.5 एकड़ नया क्षेत्र मछली पालन के अधीन लाया गया। उन्होंने कहा कि वर्तमान में ज़िले में कुल 1600.5 एकड़ क्षेत्र में मछली पालन किया जा रहा है तथा किसान राज्य व केन्द्र सरकार की विभिन्न योजनाओं का लाभ उठा कर अपने व्यवसाय का विस्तार कर रहे है। डी.सी. ने बताया कि पिछले वित्त वर्ष में बगड़िया फगन माजरा सरकारी मछली पोंग फार्म में 1.27 करोड़ मछली का उत्पादन किया गया है। उन्होंने कहा कि कोई भी व्यक्ति विभाग द्वारा समय-समय पर लगाए जाने वाले प्रशिक्षण कैंपों के दौरान मछली पालन का प्रशिक्षण लेकर निजी व पंचायती ज़मीन पर मछली पालन के तालाब विकसित कर सकता है और फतेहगढ़ साहिब ज़िले के सरकारी मछली-पालन केन्द्रों से मछली पालन करने वालों की संख्या में भी बढ़ोत्तरी हुई है। उन्होंने कहा कि किसानों ने कृषि के पारम्परिक फसल-चक्र से बाहर निकलने के लिए सहायक व्यवसायों पर भी अपना ध्यान केन्द्रित किया है।

मछली पालन विभाग के सहायक निदेशक दविंदर सिंह बेदी ने बताया कि मछली-पालन का पेशा आर्थिक मज़बूती का मानक आधार है, क्योंकि मछलियां मात्र 7-8 महीनों में ही बिक्री योग्य हो जाती है और इसका उत्पादन चक्र निरंतर चलता रहता है। उन्होंने कहा कि कृषि विविधीकरण अभियान के तहत अधिकाधिक लोग सहायक व्यवसायों की ओर बढ़ रहे है और मछली पालन ही एकमात्र ऐसा व्यवसाय है, जिसमें मेहनत कम और मुनाफा अधिक है।

सावधान! ये फल दिखाने के और हैं खाने के और

शरीर की जरूरी खुराक और पोषक तत्वों की पूर्ति के लिए हम सब भोजन के अलावा फलों आदि पर आश्रित रहते हैं। बाजार में जाते हैं और नाना प्रकार के फल अपने रूप-रंग से हमें आकर्षित करते हैं। चाहे उनका मौसम हो या न हो। यहीं पर हमें चेतने की जरूरत है। एक क्षण ठिठककर सोचिए कि अगर उस फल के पकने का सीजन नहीं है तो कैसे पका फल बाजार में बिक रहा है। यह रसायनों का कमाल है। थोड़े से लोभ के लिए लोग जिंदगी से खिलवाड़ करने में लगे है। ये फल हमारे शरीर को पुष्ट कम नष्ट ज्यादा करते है। पेश है एक नजर

पकने की प्राकृतिक प्रक्रिया :- फलों का पकना एक प्राकृतिक प्रक्रिंया होती है, जिसमें फल ज्यादा मीठे, कम हरे, मुलायम और रसीले, सुस्वादु होते है। आमतौर पर यह प्रक्रिय पेड़ों की डाली पर ही होती है, लेकिन कारोबार करने के दौरान पके फलों को दूर तक भेजने में बहुत नुक्सान होता है, लिहाजा उनका भंडारण करके पकाया जाता है। भंडारण में भी प्राकृतिक तरीके से पकने की प्रक्रिया धीमी होती है। पकने के लिए किए गए भंडारण के दौरान इनकी रसायनिक और एंजाइम संरचना में बदलाव होता है। पकने की इस प्रक्रिया में एंजाईम टूटते है साथ ही स्टार्च जैसे पॉलीसैचराईड्स हाईड्रोलिसिस प्रक्रिया से गुजरते है। यह प्रक्रिया स्टार्च का फ्रक्टोज, ग्लूकोज, सुक्रोज जैसे छोटे अणुओं में तोड़ देती है।

कैल्शियम कार्बाइड के नुक्सान :- इसमें घातक और

खतरनाक रसायन आर्सेनिक व फास्फोरस हाईड्राईड होते है। जो इंसानों पर प्रतिकूल असर डालते है। इससे पके फल खाने से पेट खराब रहता है। आंतों की कार्यशैली गड़बड़ाती है। इन तत्वों के चलते खून और ऊतकों में कम ऑक्सीजन पहुंचती है, जो हमारे तंत्रिका तंत्र पर असर डालता है।

ध्यान रखें :- अलबता बाजार से कृत्रिम रूप से पकाए फलों को खरीदे ही नहीं, अगर गलती से खरीद लिया है तो इस्तेमाल से पहले फल को अच्छी तरीके से धोएं।

आम और सेब जैसे फलों को समूचा खाने की जगह काटकर खाएं।

जितना संभव हो, उपभोग्र से पहले फल को छील लें।

ऐसे करें पहचान

प्राकृतिक रूप से पका फल :- * आकर्षक होगा, लेकिन पूरे फल का रंग एक समान नहीं होगा।

* फल का वजन अच्छा होगा।

* महक अच्छी होगी।

* सुदृढ़ और चटख होगा।

* स्वाद मीठा और अच्छा होगा।

* ज्यादा दिन खराब नहीं होगा।

कृत्रिम रूप से पका फल :- पूरे फल का एक जैसा रंग होता है, लेकिन आकर्षक नहीं दिखता।

* महक कम, फल सुदृढ़ दिखेगा।

* फल पका दिखेगा, फिर भी आंतरिक हिस्से में खट्टापन रहेगा।

* छिलके का जीवनकाल लंबा नहीं होगा। दो या तीन दिन में ही काले धब्बे दिखने लगेंगे।

पकाने की कृत्रिम प्रक्रिया :- इथाईलीन और एसिटीलीन जैसे असंतृप्त हाईड्रो कार्बन फलों को तेजी से पकाते है। हालांकि इस प्रक्रिया में फल का इंद्रिया ग्राही चरित्र जैसे स्वाद, महक, देखने में आकर्षक आदि काफी हद तक चौपट हो जाते है। शीघ्रता से पकाने के लिए कारोबारी कम समय वाले फलों में भी जरूरत से ज्यादा रसायन डाल देते है, जो इंसानी इस्तेमाल के लिए बहुत खतरनाक साबित हो सकता है। आजकल फलों को पकाने के लिए बाजार में तमाम रसायन मौजूद है। इनमें कैल्शियम कार्बाइड, कार्बन मोनॉक्साईड, पोटैशियम सल्फेट, इथीफोन, पोटैशियम डाई हाईड्रोजन, आर्थोफास्फेट, पुट्रेसिन, ऑक्सीटेसिन, फोटोपेराफायरिनोजेन आदि है।

खतरनाक रसायन है कैल्शियम कार्बाइड :- इसे आमतौर पर 'मसाला' नाम से जाना जाता है। फलों को पकाने में सर्वाधिक इसी का इस्तेमाल होता है। कई देशों में इसके इस्तेमाल पर प्रतिबंध है। शुद्ध रूप में ये रंगहीन होता है, लेकिन अन्य रूपों में यह काले, सफेद-भूरे रंग का होता है। लहसुन की तरह इसकी महक होती है। पानी (नमी) के साथ मिलकर यह एसिटिलीन गैस बनाता है, जो फलों को तेजी से पकाती है। आम, केला, पपीता, खुबानी और आलूबुखारे को बहुतायत में इसी से पकाया जाता है

क्या है कानूनी प्रावधान :- खाद्य सुरक्षा और मानक अधिनियों 2011 के अनुसार कोई भी व्यक्ति कार्बाइल से कृत्रिम रूप से पकाए गए फलों को नहीं बेच सकता है। कानून की धारा 50 के अनुसार, अगर तय मानकों पर किसी विक्रेता के फल खरे नहीं उतरते तो उस पर पांच लाख तक जुर्माना लगाया जा सकता है। इसी कानून की धारा 59 में ऐसा करने वालों के लिए सजा का भी प्रावधान है। अगर किसी को ऐसा करता कोई व्यक्ति मिल जाए तो उसकी शिकायत राज्य के फूड सेफ्टी कमिश्नर के यहां की जा सकती है।

गर्मियों की संजीवनी बेलगिरि

उत्तरी भारत के राजस्थान, पंजाब, हरियाणा एवं उत्तर प्रदेश में अप्रैल से जून के महीनों में भीषण गर्मी पड़ती है, जिसके कारण शरीर में पानी की भारी कमी हो जाती है। पानी की पूर्ति के लिए प्राय: कृत्रिम पेय पदार्थों का सेवन करते हैं। कृत्रिम पेय पदार्थों में पानी, चीनी, रसायन, खुशबू एवं कार्बन डाईऑक्साईड गैस के इलावा कुछ भी नहीं होता। कृत्रिम पेय पदार्थ आमतौर पर स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं। फलों से बनाए गए पेय पदार्थों का सेवन स्वास्थ्यवर्धक एवं स्वादिष्ट होता है। गर्मियों में अर्जीण, पेचिस एवं डायरिया इत्यादि बीमारियां मनुष्य को घेर लेती हैं। बेलगिरि स्वास्थ्यप्रद एवं औषधीय फल है, जो विभिन्न प्रकार के पोषक तत्वों से भरपूर है, जैसे खनिज पदार्थ, विटामिनज एवं कार्बोहाईड्रेट। इसलिए इसको उच्च-कोटि के पोषण फलों के रूप में जाना जाता है। इस फल के सेवन से मनुष्य हृष्ट-पुष्ट रहता है। बेल का कच्चा फल खाने में स्वादिष्ट ना होने के कारण मुरब्बा बना कर सेवन किया जाता है। आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में इसकी तासीर ठंडी मानी जाती है, जो पेट की अग्नि को शांत करती है। इसमें रेशे की मात्रा अधिक होने के कारण पेट के हानिकारक जीवाणुओं को पेट से निकाल कर, पेट की बीमारियों को ठीक करने में सहायक है। पके हुए फलों को आमतौर पर ताज़ा खाते हैं। बीज एवं गोंद की अत्याधिकता होने के कारण, इस फल का सेवन कठिन

हो जाता है। बेल का सेवन निम्न प्रकार से कर सकते है, जो स्वादिष्ट, स्वास्थ्यवर्धक एवं ताज़गी प्रदान करेंगे।

फल का चयन : पूर्ण रूप से पकी हुई बेलगिरि का चयन करें। पकी हुई बेलगिरि का नक्वा (Pedical) आसानी से अलग हो जाता है। इसमें प्राकृतिक खुशबू पूर्ण विकसित होती है। क्षति ग्रसित एवं रोग ग्रसित बेल का चयन ना करें, क्योंकि क्षति ग्रसित फल में फफूंदी बड़ी जल्दी लग जाती है और फल खराब हो जाता है।

धोना : पूर्ण रूप से पकी (नाकू छोड़ने के बाद), रोग रहित एवं जो क्षति ग्रसित नहीं है, साफ पानी से धोएं।

गुद्दा तैयार करना : धोए हुए फलों को आराम से फोड़ें व उसमें से स्टील की चम्मच से गुद्दा निकाल कर स्टील के बर्तन में डालें। तत्पश्चात् बराबर मात्रा में पानी मिला कर इसको गोंद या मथ लें ताकि बीज इत्यादि अलग हो जाएं तथा गुद्दा पानी में मिल या घुल जाए। इस घोल को साफ मलमल के कपड़े से छान लें। उससे छना हुआ गुद्दा/रस सेवन के लिए तैयार है। इस गुदे का सेवन पानी या दूध के साथ कर सकते हैं या विभिन्न पेय पदार्थ बना कर भी कर सकते है। जैसे कि बेल आर.टी. एस., नैक्टर, स्क्वैश, सीरप आदि इन पेय पदार्थों को आसानी से निम्न अनुपात में सामग्री मिला कर बनाया जा सकता है :

सामग्री	आर.टी.एस. मात्रा	नैक्टर मात्रा	स्क्वैश मात्रा
बेल गुद्दा	1 लीटर	1 लीटर	1 लीटर
चीनी	1.2 कि.ग्रा.	750 ग्राम	1.80 कि.ग्रा.
सिट्रिक अम्ल	28 ग्राम	16 ग्राम	28 ग्राम
पानी	7.7 लीटर	3.2 लीटर	1 लीटर
सोडियम बेंजोएट	–	–	2.5 ग्राम

बेल आर.टी.एस. : ये एक ऐसा पेय पदार्थ है, जिसमें गुदे की मात्रा 10 प्रतिशत, चीनी की मात्रा 10 प्रतिशत एवं सिट्रिक अम्ल 0.3 प्रतिशत होता है।

इसका सेवन बिना पानी मिलाए किया जा सकता है।

बनाने की विधि : बताई गई विधि से बेल का बेल का गुदा तैयार करें। तत्पश्चात् चीनी की चाशनी बनाएं। चाशनी बनाने के लिए 2-3 लीटर पानी में निर्धारित मात्रा में चीनी व सिट्रिक अम्ल मिलाए पानी को उबालें, उबलने पर, चाशनी के ऊपर की मैली उतारें। चाशनी को ठंडा करें व गुदे में मिलाएं। पानी मिला कर कुल मात्रा 10 लीटर बनाएं। इसको 200 या 300 मिलीलीटर की साफ बोतलों में भर कर बोतलों को सील करें। बोतलें पके कांच की होनी चाहिए, ताकि बोतलों को गर्म करने पर टूटे नहीं। अब इन सीलबंद को 30 मिनट तक उबलते पानी में रख कर जीवाणु रहित करें। ठंडा होने पर बोतलों को ठंडे स्थान पर रखें व आवश्यकता अनुसार सेवन करें।

बेल नैक्टर : यह भी एक प्रकार का पेय पदार्थ है, जिसमें गुदे की मात्रा 20 प्रतिशत, चीनी 15 प्रतिशत व अम्ल 0.3 प्रतिशत होता है। इसका सेवन भी बिना पानी मिलाए किया जाता है।

विधि : नैक्टर को भी आर.टी.एस. की तरह ही बनाया जाता है। सामग्री की मात्रा नैक्टर वाली प्रयोग करें। नैक्टर की कुल मात्रा 5 लीटर बनानी होगी।

बेल स्क्वैश : बाज़ार में कई प्रकार के स्क्वैश मिलते है। अधिकतर वे कृत्रिम होते है। स्क्वैश का सेवन पानी मिला कर किया जाता है। स्क्वैश में गुदे की मात्रा कम से कम 25 प्रतिशत, चीनी की मात्रा 40 प्रतिशत एवं सिट्रिक अम्ल 1.2 प्रतिशत होता है।

विधि : उपरोक्त बताई गई सामग्री से चीनी की चाशनी बनाएं। चाशनी ठंडा होने पर गुद्दा मिलाएं। स्क्वैश तैयार है। अधिक समय तक स्क्वैश का भंडारण करने के लिए 2.5 ग्राम सोडियम भर कर ठंडे स्थान पर भंडारण करें। आवश्यकता अनुसार पानी मिला कर सेवन करें।

फसलों में :

कपास :- कपास की फसल को पहला पानी देने से पहले एक गोड़ी अवश्य कर लें। इससे घास-फूस नष्ट हो जाते हैं। नमी कुछ और समय तक बनी रहती है। जहां तक संभव हो सिंचाई देर से करें। फसल में पौधों की दूरी कम से कम 30 सै.मी. व संकर कपास में 60 सै.मी. रखें। साधारण: कपास में पहला पानी बुवाई के 45-50 दिन बाद लगायें।

2, 4-डी इस फसल के लिए अत्यंत घातक हैं। इस लिए ध्यान रखें, कि जिन छिड़काव यंत्रों से 2, 4-डी पहले प्रयोग में लाया गया हो, उन्हें फफूंदनाशक या कीटनाशक दवाओं के छिड़काव के लिए प्रयोग में न लायें। 2, 4-डी का संपर्क कपास के प्रयोग में लाए जाने वाले उर्वरकों, कीट व फफूंदनाशक दवाओं के साथ भी न होने दें।

चूरड़ा (थ्रिप्स) या माईट का प्रकोप होने पर 250 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या 300 मि.ली. मैटासिस्टॉस 25 ई.सी. को 150 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। कोणदार धब्बों से बचाव के लिए प्रति एकड़ फसल पर 6 ग्राम स्ट्रैप्टोसाईक्लिन व 600 ग्राम कॉपर आक्सीक्लोराईड प्रति एकड़ 150 लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें। मीलीबग से बचाव के लिए नदी-नालों, सड़कों, मेढ़ों, खालों आदि के किनारों पर उगने वाले खरपतवारों, विशेषकर कांग्रेस घास को जलाकर नष्ट करें।

गन्ना :- समय-समय पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें व खरपतवारों को नलाई करके निकाल दें।

गन्ने की फसल में नाईट्रोजन की तीसरी मात्रा इस महीने के अंत तक अवश्य डाल दें। गन्ने के खेत में चौथा पानी लगाने के बाद जब खेत में बत्तर आ जाए, तो 45 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से डालकर ऊपर से गोड़ी कर दें या फिर यही मात्रा खरपतवार रहित खेत में पानी लगाने से पहले डालें और बाद में हल्का पानी लगा दें। मोढ़ी फसल में उपर्युक्त खादों की डेढ़ गुनी मात्रा डालें।

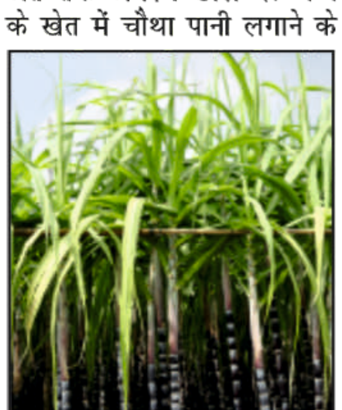

कांगियारी के प्रकोप को रोकने के लिए कांगियारीयुक्त दुमों के ऊपर बोरी चढ़ाकर सावधानी से काट लें और बाद में रोगी पौधों को जड़ से उखाड़ कर नष्ट कर दें। कांगियारीयुक्त दुमों से भरी बोरी को दस मिनट तक उबलते हुए पानी में रखकर कांगियारी के बीजाणुओं को नष्ट कर दें। इस कार्यक्रम को अभियान के रूप में अपनाएं।

यदि मोढ़ी फसल हो व कनसुआ का प्रकोप हो, तो 2.5 लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई. सी. प्रति एकड़ फसल में सिंचाई के साथ दें। काली भुंडी व पाइरिल्ला का आक्रमण होने पर 400 मि. ली. फेनिट्रोथियॉन 50 ई.सी. या 160 मि.ली. डाईक्लोरोवास 76 ई.सी. को 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। परजीवियों द्वारा पाइरिल्ला की रोकथाम करें। अधिक जानकारी के लिए नजदीक के कृषि विज्ञान केन्द्र या गन्ना अनुसंधान केन्द्र, जी.टी. रोड, करनाल या गन्ना विभाग के अधिकारियों से मिलें। माईट (अष्टपदी) को मारने के लिए 500 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या 600 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। कुछ क्षेत्रों में चोटी बेधक (टॉप बोरर) काफी नुकसान पहुंचाता है। इसके लिए जून के अंतिम सप्ताह में 13 किलोग्राम कार्बोफ्यूरान 3 जी (फ्यूराडॉन) या 8 किलोग्राम फोरर (थिमेट) 10-जी दानेदार कीटनाशक प्रति एकड़ डालकर तुरंत सिंचाई कर दें। यह उन्हीं खेतों में डालें, जिन में अप्रैल-मई में 5 प्रतिशत से अधिक पौधे कीटग्रस्त थे या फिर पिछले वर्ष 15 प्रतिशत से अधिक क्षति थी। इन कीटनाशकों को यूरिया खाद में मिलाकर भी डाल सकते हैं।

बैसाखी मूंग :- मूंग में 70-80 प्रतिशत फलियां पकने पर फसल की कटाई कर लें, ताकि सावनी फसलों की बुवाई के लिए खेत खाली हो सकें।

गर्मियों में ली जाने वाली फसलों में हरा तेला, सफैद मक्खी और छोटी-छोटी सुंडियों की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 250 मि.ली. डाईमेथोएट 30 ई.सी. या 250 मि.ली. आक्सीडेमिटोन मिथाईल 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

धान :- धान की रोपाई इस माह से शुरू कर दें। इसके लिए खेत के चारों ओर डोलों को मजबूत करें, खेत में अच्छी तरह पौध पनपने के लिए व पानी बनाए रखने के लिए खेत को अच्छी तरह कद्दू करके एकसमान कर लें। यदि खेत में हरी खाद वाली फसल खड़ी हो, तो जुताई करके पहले इसे दबा दें, व फिर रोपाई करें। पौध की पंक्तियों में रोपें। लंबी किस्मों की रोपाई 20×15 सै.मी. की दूरी पर करें। बौनी किस्मों की व पछेती हालत में लंबी बढ़ने वाली किस्मों की रोपाई 15 सै.मी. फासले की कतारों में व पौधों में 15 सै.मी. की दूरी रखकर करें। ध्यान रखें कि पौध 2-3 सै.मी. से अधिक गहरी न रोपें।

यदि पनीरी गारा किए खेत में लगाई जा रही है, तो ऐसे खेतों में लगाने से पहले 20 किलोग्राम यूरिया और 60 किलोग्राम सुपरफास्फेट या 22 किलोग्राम डी. ए.पी. तथा 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ का छींटा लगाएं। 15 दिन की पनीरी होने पर 25 किलोग्राम यूरिया का छींटा देकर ऊपर से हल्का पानी लगाएं।

बौनी मध्य अवधि वाली किस्मों, जैसे जया, पी आर-106, एच के आर-120, एच.के.आर. -126 में 130 किलोग्राम यूरिया, 150 किलोग्राम सिंगल सुपरफास्फेट, 40 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश तथा 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ प्रयोग करना चाहिए। जबकि बौनी, कम अवधि वाली किस्मों, जैसे आई.आर.-64, एच. के.आर.-46, एच.के.आर.-47 व गोबिन्द आदि में 105 किलोग्राम यूरिया, 150 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट, 40 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश व जिंक सल्फेट की ऊपर बताई गई मात्रा प्रति एकड़ प्रयोग करें। नत्रजन की 1/3 मात्रा तथा फास्फोरस, पोटाश व जिंक सल्फेट की पूरी मात्रा खेत तैयार करते समय प्रयोग करें तथा 1/3 नत्रजन की मात्रा बुवाई के 21 दिन बाद व 1/3 मात्रा रोपाई के 42 दिन बाद प्रयोग करे। यदि खेत में ढैंचें की हरी खाद लगाई गई हो, तो ऊपर बताई गई नत्रजन की 1/3 मात्रा कम कर दें।

लंबी बासमती धान में 50 कि.ग्रा. यूरिया, 75 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ प्रयोग करें, जबकि बौनी बासमती में 80 किलोग्राम यूरिया, 75 किलोग्राम/एकड़ सिंगल सुपर फास्फेट व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रयोग करें। फास्फोरस व जिंक सल्फेट की पूरी मात्रा खेत तैयार करते समय प्रयोग करें। लंबी बासमती में नत्रजन की आधी मात्रा रोपाई के 21 दिन बाद व शेष आधी मात्रा 42 दिन बाद डालें। जबकि बौनी बासमती में 1/3 नत्रजन खेत की तैयारी करते समय, 1/3, 21 दिन बाद व 1/3, 42 दिन बाद प्रयोग करें। ध्यान रहे, कि नत्रजन उर्वरक उस समय दें, जब खेत में पानी खड़ा न हो।

खरपतवारों की प्रारंभ से ही रासायनिक ढंग से रोकथाम के लिए पौध लगाने के 1-3 दिन बाद खड़े पानी में (4-5 सै.मी. गहरा) प्रति एकड़ 12 किलोग्राम क्लोरोपायरीफॉस और बासालीन या बुटाक्लोर 50 प्रतिशत प्रति एकड़ 1.2 लीटर के हिसाब से 60 किलोग्राम सूखी रेत में मिलाकर रोपाई के 2-3 दिन बाद खड़े पानी में छिड़क दें। यदि घोल वाली बासालीन डालनी हो, तो प्रति एकड़ 500-600 मि.ली. को 100 लीटर पानी में या 60 किलोग्राम सूखी रेत में मिलाकर रोपाई के तुरंत बाद खड़े पानी में छिड़क दें। इसके अतिरिक्त प्रटिलाक्लोर-50 ई.सी. (रिफिट) या प्रटिलाक्लोर (इरेंज) 50 ई.सी. या टॉपस्टार 80 घु.पा. 800 ग्राम प्रोडक्ट को 60 कि.ग्रा. सूखी रेत में मिलाकर पौधरोपण के 2-3 दिन बाद 4-5 सै.मी. खड़े पानी में एकसमान बिखेर दें। चौड़े पत्ते वाले या झाड़ीनुमा खरपतवारों के नियंत्रण हेतु मेटसल्फ्यूरान+ क्लोरीफ्यूरान (एलमिक्स 20 घु.पा.) का 8 ग्राम तैयारशुदा मिश्रण+0.2 प्रतिशत सरफेक्टेन्ट या ईथोक्सीफ्यूरान (सनराईस-15 पानी में घुलनशील दाने) 50 ग्राम या 2,4-डी एस्टर/अमाईन 400 ग्राम (प्रोडक्ट) पौधरोपण के 20-25 दिन बाद 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। ध्यान में रखें, कि उपर्युक्त खरपतवारनाशकों में से केवल एक ही का प्रयोग एक बार ही करना होता है।

बीज जनित रोगों से बचाव के लिए बीजोपचार अवश्य करें। भारी व स्वस्थ बीज के चुनाव हेतु 10 प्रतिशत नमक के घोल (10 लीटर पानी में 1 किलोग्राम नमक) में बीज को थोड़ा-थोड़ा करके डालें। ऊपर तैरते हुए बीज तथा अन्य पदार्थों को बाहर निकालकर नष्ट कर दें। नीचे बैठे भारी बीज को साफ पानी में 3-4 बार धो लें, ताकि बीज की सतह पर नमक का अंश न रहने पाए और फिर बीजगत फफूंद व जीवाणुओं के निवारण के लिए फफूंदनाशक उपचार करें। इसके लिए 10 लीटर पानी में 10 ग्राम एमिसान या 10 ग्राम कार्बेडाजिम (बाविस्टिन) व 2.5 ग्राम

शेष पृष्ठ 10 पर

शेष पृष्ठ 7 की

जून माह के कृषि कार्य

पौसामाईसिन या 1 ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लिन घोल लें और इस घोल में 8 कि.ग्रा. लंबी किस्मों के व 12 किलोग्राम बौनी किस्मों के बीज को 24 घंटे तक भिगोकर उपचारित करें। पौध शय्या में यदि पौध पीली पड़कर सफैद हो जाए, तो 0.5 प्रतिशत हरा कसीस या फैरस सल्फेट के घोल का छिड़काव करें।

धान में जड़ की सुंडी की समस्या हो, तो 10 किलोग्राम कार्बेरिल 4-जी या सेविडाल-4जी या कार्बोफ्यूरान 3-जी या 4 कि.ग्रा. फोरेट 10-जी प्रति एकड़ डालें।

बाजरा :- बाजरे की बुवाई करने का समय आ ही गया है। उन्नत संकर किस्मों, एच.एच.बी.-50, 60, 67, 67 संशोधित, 68, 94, 117 व 146 तथा मिश्रित एच.सी. 10 व 20 के बीज का अपने साधनों के हिसाब से प्रबंध कर लें। संकर बाजरे का बीज हर साल नया लेकर ही बोएं। वैसे तो 1-15 जुलाई तक का समय बाजरे की बुवाई का उत्तम समय है, परन्तु बारानी इलाकों में मौनसून की पहली वर्षा पर ही बुवाई शुरू करें। खेत को 2 या 3 बार जोतकर तुरंत सुहागा लगाकर अच्छी तरह तैयार करें, ताकि घास-फूस न रहे व नमीं बनी रहे। बारानी क्षेत्रों में वर्षा से पहले खेत के चारों तरफ

खूब मजबूत डोलें बनाएं ताकि खेत में पानी जमा हो जाए, तो आगामी फसल के काम आए। एक एकड़ के लिए 1.5 से 2 किलोग्राम बीज चाहिए। खेत में सही उगाव के लिए बुवाई खूडों में इस तरह से करें, कि बीज के ऊपर 2.0 सैं.मी. से ज्यादा मिट्टी न पड़े। दो खूडों का फासला 45 सैं.मी. रखें। वर्षा के मौसम में मेढ़ों पर बुवाई करना अच्छा होता है। इस तरीके की बुवाई के लिए विश्वविद्यालय के शुष्क खेती अनुसंधान केन्द्र द्वारा निर्मित मेढ़ों पर बीजने वाले हल का प्रयोग करें।

यदि असिंचित संकर बाजरा इस माह के अंत में बोने जा रहे है, तो उसमें 16 किलोग्राम नाईट्रोजन, जोकि लगभग 35 किलोग्राम यूरिया से प्राप्त हो सकती है, बुवाई के समय डालें। यदि खेत में फास्फोरस की मात्रा मध्यम दर्जे से कम है, तो इस भूमि में 50 कि.ग्रा. सुपरफास्फेट प्रति एकड़ के हिसाब से भी डालें। रेतीली व हल्की भूमि में 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट बुवाई के समय प्रति एकड़ अवश्य डालें।

सिंचित क्षेत्रों में संकर बाजरे में बुवाई के समय 25 कि.ग्रा. नत्रजन, 25 कि.ग्रा. फास्फोरस व 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ डालें। इसके लिए बुवाई के समय 55 कि.ग्रा. यूरिया व 150 किलोग्राम सिंगल सुपरफास्फेट प्रति एकड़ डालें। बाकी नत्रजन को दो बार बराबर मात्रा में पौधों की छंटाई के बाद व सिट्टे निकलते समय डालें।

बुवाई से पूर्व बीजोपचार करना न भूलें। बीजोपचार के लिए 10 प्रतिशत नमक के घोल (10 लीटर पानी में 1 कि.ग्रा. नमक) में बाजरे के बीज को थोड़ा-थोड़ा डालकर हाथ से हिलाएं। चेपा के पिंड तथा तैरते हुए पदार्थो को निकालकर नष्ट कर दें तथा नीचे बैठे हुए भारी बीजों को साफ पानी से 3-4 बार अच्छी तरह धोकर छाया में सूखा लें, ताकि बीज पर से पानी सूख जाए और पुन: प्रति किलोग्राम बीज का 2.0 ग्राम एमिसान व 4 ग्राम थाइरम से सूखा उपचार करके बोएं, जो किसी बीजोपचारी ड्रम या मिट्टी के घड़े आदि में किया जा सकता है। घड़े या ड्रम में दो-तिहाई बीज और आवश्यक अनुपात में दवा डाल देते है। यदि उपचार घड़े से करें, तो घड़े के मुंह को पॉलिथीन या मोटे कपड़े से बांध लें और फिर बीज व दवा से भरे हुए घड़े या ड्रम को लगभग 10 मिनट तक अच्छी तरह हिलाएं ताकि दवा अच्छी तरह मिल जाए। अगेती बोई फसल, यानि जून के अंतिम या जुलाई के शुरू में बोई गई फसल के अरगट या चेपा का प्रकोप कम होता है।

अरहर :- अरहर की कम समय में पकने वाली पारस, मानक व यू.पी.ए.एस.-120, अच्छी किस्में हैं, जो कि 130-140 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। इन सभी की बुवाई इस माह में पूरी कर

लें। एक एकड़ के लिए लगभग 5-6 किलोग्राम बीज डालें। इन सभी किस्मों की बुवाई कतारों में 40 सैं.मी. की दूरी रखकर करें। यह और भी अच्छा रहेगा, कि अरहर की दो कतारों के बीच के हिस्से में मूंग या उड़द की कम समय में पकने वाली किस्म, जैसे मुस्कान या आशा या उड़द टाईप-9 की एक-एक कतार उगाई जाए। यदि ऐसा करना हो, तो खूडों का फासला 50 सैं.मी. रखकर अरहर की बुवाई करें। बीज को राईजोबियम के टीके से उपचारित करके ही बोएं। जिन खेतों में गत् वर्ष अंगमारी का प्रकोप रहा हो, उनमें अरहर की खेती न करें।

अरहर की बुवाई करते समय 18 किलोग्राम यूरिया और 100 कि.ग्रा. सिंगल सुपरफास्फेट या इनके अभाव में 35 किलोग्राम डाइअमोनियम फास्फेट (डी.ए.पी.) प्रति एकड़ के हिसाब से बुवाई के समय ड्रिल करें। बीज को बोते समय राईजोबियम का टीका लगाने से पैदावार में वृद्धि की संभावना रहती है। इसके लिए एक एकड़ के बीज में एक टीका राईजोबियम का व एक टीका फास्फोबैक्टीरिया का बुवाई से पहले लगाना चाहिए।

मूंगफली :- मूंगफली की बुवाई इस माह के अंतिम सप्ताह से शुरू कर देनी चाहिए तथा जुलाई के प्रथम सप्ताह तक पूरी कर लें।

इसकी उन्नत किस्मों, मुख्यत: गुच्छेदार किस्मों, एम.एच.-2 और एम.एच.-4 व फैलने वाली किस्मों एम-145, एम-13 व पंजाब मूंगफली नं.-1 बोने की सिफारिश की जाती है। एम.एच.-2 किस्म को छोड़कर बाकी अन्य किस्मों की बुवाई कतार से कतार का फासला 30 सैं.मी. रखकर करनी चाहिए व एम.एच.-2 किस्म की बुवाई 15 सैं.मी. का फासला रखकर खूडों में करनी चाहिए। कतारों में बुवाई इस प्रकार करें, कि बीज लगभग 15 सैं.मी. के फासले पर पड़ें, जबकि पंजाब मूंगफली नं. -1 के लिए यह फासला 22.5 सैं.मी. रखें। किस्म एम.एच.-2 व एम.-13 के लिए 60 किलोग्राम मूंगफली की गिरी व एम-145 के लिए 45 किलोग्राम व एम.एच. -1 हेतु 40 किलोग्राम और एम.एच.-4 के लिए 32 किलोग्राम गिरी व पंजाब मूंगफली नं.-1 के लिए 34 किलोग्राम गिरी प्रति एकड़ की दर से डालें।

दीमक व सफैद लट के प्रकोप से फसल को बचाने के लिए 15 मि.ली0 क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. या क्विनलफॉस 25 ई.सी. प्रति किलोग्राम बीज में बुवाई से दो-तीन घंटे पूर्व मिला लें।

जून में वर्षा होते ही सफैद लट के प्रौढ़ों (भुंडों) को अभियान चलाकर नष्ट करें।

मूंगफली बोते समय एक एकड़ भूमि में बुवाई के समय 12 कि.ग्रा. यूरिया या 30 कि.ग्रा. अमोनियम सल्फेट, 125 कि.ग्रा. सुपरफास्फेट, 16 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश व 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट मिलाकर ड्रिल करें। मूंगफली में जिप्सम का प्रयोग लाभदायक पाया गया है।

बीज गलन व पौध गलन से बचाव के लिए रोगमुक्त गिरियों को बोने से पूर्व कैप्टान या थाइरम (3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) से उपचारित अवश्य कर लें।

तिल :- तिल की बुवाई अगले महीने या मौनसून की पहली वर्षा पर की जा सकती है। इसके लिए उन्नत किस्म हरियाणा तिल नं.1 की सिफारिश की जाती है। एक एकड़ के लिए लगभग 2 कि.ग्रा. बीज इस्तेमाल करें और पंक्तियों में एक फुट के फासले पर बुवाई करें। पौधे से पौधे का फासला 15 सैं.मी. रखें। बुवाई के समय 35 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ पोरों। खूडों का फासला 30 सैं.मी. रखें। जड़गलन व तना गलन के बचाव के लिए बीज का उपचार थाइरम 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज के हिसाब से करें।

मक्का :- मक्का की बुवाई इस माह के अंत में शुरू कर लें। केवल उन्नत किस्में एच.एम.-1, एच.एम.-2, एच.एम.-4, एच.एम.

-5 व एच.क्यू.पी.एम-1 बोएं। एक एकड़ मे बुवाई के लिए 7 कि.ग्रा. बीज की जरूरत पड़ती है। खेत को अच्छी तरह तैयार करके बुवाई कतारों में 75 सैं.मी. व पौधे से पौधे की 22 सैं.मी. की दूरी पर करें। मक्का की अगेती-76 किस्मों में 135 कि.ग्रा. यूरिया, 150 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट, 40 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश व 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ डालें। फास्फोरस, पोटाश व जिंक सल्फेट बुवाई पर डाले व 1/3 नत्रजन की मात्रा बुवाई पर, 1/3 जब फसल एक फुट की लंबाई की हो जाए व 1/3 मात्रा जब सिट्टे निकलने वाले हो, तब डालें।

बीज गलन व पौध अंगमारी से बचाव के लिए बोने से पहले बीज को थाइरम (4 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) से उपचारित करें।

गेहूं :- बीज हेतु रखने वाले गेहूं का यदि आप सौरताप या सूर्य की गर्मी से बीजोपचार कर लें, तो आप अगले वर्ष इन्हीं बीजों से खुली कांगियारी रहित गेहूं की फसल ले सकते हैं। बीजोपचार के लिए मई-जून के महीने में किसी शांत व धूप वाले दिन गेहूं को 8 बजे प्रात: से 12 बजे दोपहर तक पानी में भिगोयें। ऊपर तैरते हुए पदार्थो को बाहर निकालकर नष्ट करें। चार (4) घंटे बाद भीगे हुए बीज को किसी पक्के फर्श या तिरपाल पर दिन भर सुखाकर अगले वर्ष बोने के लिए प्रयोग में लाएं। धूप उपचार के बाद किसी दवा उपचार की आवश्यकता नहीं।

सोयाबीन :- जून के अंत से जुलाई के आरंभ तक बुवाई करें। अच्छे जमाव के लिए बुवाई के समय भूमि में नमीं पूरी मात्रा में होनी चाहिए। 30 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़, कतार से कतार का फासला 45 सैं.मी. रखकर 2.5 सैं.मी. गहरी बुवाई करें। पी.के.-416, 564 और 472 किस्में ही बोएं। 22 कि.ग्रा. यूरिया और 200 कि.ग्रा. एस.एस.पी. प्रति एकड़ बुवाई के समय डालें।

ज्वार :- एच सी-136, 171, 260 व 308 किस्मों की 25 जून से 10 जुलाई तक बुवाई करें। 20-24 कि.ग्रा. बीज व सुडान घास के लिए 12-14 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़, 25 सैं.मी. कतार से कतार की दूरी पर बुवाई करें। कम वर्षा वाले व बारानी इलाकों में बुवाई के समय 20 कि.ग्रा. नाईट्रोजन प्रति एकड़ डालें। सारी खाद बुवाई के समय कतारों में ड्रिल करें। अधिक वर्षा वाले व सिंचित इलाकों में 20 कि.ग्रा. नाईट्रोजन प्रति एकड़ बुवाई के समय तथा 10 कि.ग्रा. नाईट्रोजन प्रति एकड़ बुवाई के एक महीने बाद डालें।

दाने की कांगियारी से बचाव के लिए बीज को एमिसान 2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

क्रमश:

बीज उपचार

महत्व, विधियां, सावधानियां एवं लाभ

स्वस्थ बीज ही सफल खेती का आधार है। फसलों के ज्यादातर रोग बीज एवं मृदाजनित हैं। यदि बीज निरोग है तथा मृदा रोग जनित रोगाणुओं व कीटों रहित है, तो फसलोत्पादन अधिकतम हो सकता है। रोगाणु बीज की सतह, उसके अंदर या बीज के साथ मिश्रित रोगी पत्तियों तथा अन्य पौधों के रोगी भागों के रूप में पाए जाते है तथ आगामी फसल के बीज व पौध अवशेषों में जीवित रहते है। बुवाई के बाद रोगजनक की प्रकृति के अनुसार रोगी बीज खेत में अंकुरण से पहले या उसके तुरंत बाद सड़कर नष्ट हो जाते हैं या बाद में पौधों के विभिन्न भागों में रोग पैदा करते है। खड़ी फसल में रोग या कीट को देखकर किसान, आढ़तियों और दुकानदारों के चक्कर लगाता है, लेकिन कई तरह की कीटनाशी व फफूंदनाशी दवा छिड़कने के बाद ठीक न होने पर कृषि वैज्ञानिक व कृषि अधिकारियों से सलाह के बाद यह जानकर कि उक्त बीमारी या कीट का ईलाज केवल बीजोपचार ही था, बड़ा ही लाचार होकर घर लौटता है। बीजोपचार न करने की अवस्था में फसल रोग काफी प्रबंध करने के बावजूद 20-30 प्रतिशत नुकसान पहुंचा देता है। अत: बीज उपचार से जड़ गलन, तना गलन, उखेड़ा, सूत्रकृमि, कांगियारी, दीमक, सफैद लट आदि रोग व कीटों से फसल जमाव से लेकर 50-60 दिनों तक काफी बचाव संभव है। बीजोपचार एक अति आवश्यक, बिलकुल सस्ता व प्रभावी तरीका है।

प्रमाणित साफ और स्वस्थ बीजों को भी फफूंद रोगों तथा कीटों मुख्यत: दीमक से सुरक्षित रखने के लिए फफूंदनाशक दवा एवं कीटनाशक दवा से उपचार किया जाता है। बीज उपचार से बीज जनित रोगाणु नष्ट हो जाते हैं और रोग का फैलाव अन्य पौधों में नहीं होता। पौधे छोटी अवस्था में मुलायम व नाजुक होते है अत: इस अवस्था में बीज उपचार रोगों एवं दीमक से उनकी रक्षा करता है। दीमक शुरू से लेकर अंत तक बीज एवं पौधों की जड़ों को कुरेद-कुरेद कर चट कर जाती है और पौधों की जड़ों को मिट्टी में पोषक तत्वों से अलग कर देती है, जिससे पौधे शुरू-शुरू में पीले पड़ते है, परन्तु बाद में मृत हो जाते है। इस प्रकार खेत में पौधों की संख्या कम हो जाती है और इसका सीधा असर उत्पादन पर पड़ता हैं बीजोपचार न करने पर प्रति एकड़ दीमक द्वारा 5-10 प्रतिशत तक पैदवार में कमी आती है। शुष्क क्षेत्रों के किसानों को ज्यादा ही दीमक के प्रति जागरूक होने की जरूरत है, क्योंकि इन क्षेत्रों में दीमक की समस्या अधिक होती है।

बीजापचार करने के लिए खर्चा लागत न के बराबर आता है। धान में बकाने रोग का कोई ईलाज नहीं है, यदि बीजोपचार नहीं किया जाए। बीज उपचारित न होने के कारण बाद में पौधों में यदि रोग आ जाए, तो रोग को रोकने में पैसा अधिक खर्चा होता है और इसके ईलावा रोग से फसल की गुणवत्ता पर भी विपरीत असर पड़ता है। प्राय: प्रजनक बीज, आधार बीज एवं प्रमाणित बीज उपचारित किए हुए होते है। यदि बीज उपचारित किए हुए नहीं है, तो बोने से पहले बीज उपचार अवश्य करना चाहिए, ताकि अधिक उत्पादन लेकर अर्थिक लाभ प्राप्त किया जा सके। किसान भाई प्रयास करें, कि अपने खेत के आस-पास

के किसान भी बीजों को उपचारित करके बुवाई करें, ताकि सभी के खेतों में फसलें रोगमुक्त हो और बिमारियां एक खेत से दूसरे खेत में न फैले। बीज उपचार का मुख्य उद्देश्य बीज तथा भूमि में रोगजनकों एवं दीमक से बीज की रक्षा करना है।

बीजोपचार की विधियां :

1. भौतिक विधि :- भौतिक विधि में निम्नलिखित विधियां प्रचलित है :

बीज की सफाई :- बीज के साथ मिश्रित पौधों के अन्य भागों हो हाथ द्वारा आसानी से अलग किया जाता है, क्योंकि ये रोगजनक हो सकते हैं।

सूर्य ताप :- बीज को सूर्य ताप में 4 घंटे तक सूखने दें, जिससे बीज के आंतरिक बीजजन्य रोगाणु नष्ट हो जाए।

गर्म जल :- बीज या बीज के लिए प्रयोग अन्य भाग को 52-54 डिग्री सैल्सियस तापमान पर 15-30 मिन्ट भिगोने पर रोगाणु नष्ट हो जाते है और बीज अंकुरण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

विकिरण :- विभिन्न तीव्रता की अल्ट्रावायलेट या एक्स किरणों को अलग-अलग समय तक बीजों से गुजारना।

2. रासायनिक विधि :- रासायनिक विधियों में रोगाणुनाशक दवाओं का प्रयोग किया जाता है। ये रोगाणुनाशक दवाएं दो प्रकार ही होती हैं :

क. बाह्य बीज रोगाणुनाशक :- इनके द्वारा बीज की सतह पर मौजूद फफूंद नष्ट हो जाते हैं। जैसे थिराम/थाइरम, कैप्टान, एमीसान, इंडोथेन एम-45, इंडोथेन जैड 75 आदि। इन दवाओं की ज्यादातर 2-3 ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम बीज को उपचारित करने के लिए उपयुक्त होती है।

ख. अन्त: / भीतरी रोगाणुनाशक :- ये दवाएं बीज की ऊपरी सतह पर तथा मध्य में प्रवेश बीज को रोगमुक्त करती हैं। जैसे कार्बेंडाजिम, बाविस्टिन, विटावैक्स आदि। बीजोपचार कि लिए प्रति कि.ग्रा. बीज 1.5 से 2.5 ग्राम दवा की मात्रा पर्याप्त रहती है।

उपरोक्त दोनों प्रकार की रोगाणुनाशक दवाएं बीज के चारों ओर एक रक्षा कवच सा बना लेती हैं और बीज में होने वाले रोगजनक के साथ-साथ ये मृदा में उपस्थित रोग कारकों को नियंत्रित करती है। फफूंदनाशक दवाओं से बीजोपचार करने की प्राय: तीन विधियां ज्यादा प्रचलित है-

1. सूखा उपचार :- बीजोपचार के लिए बीज तथा फफूंदनाशक दवा की उपयुक्त मात्रा को ड्रम या घड़े में डालकर दस मिन्ट तक घुमाते है। सूख बीजोपचार बुवाई से ठीक पहले कर लेना अधिक लाभप्रद होता है। यह विधि ज्वार, उड़द, मूंग, अरहर, सोयाबीन, मूंग, अरहर, सोयाबीन, मूंगफली आदि के लिए उपयुक्त है।

2. गीला उपचार :- यह विधि प्राय: ऐसी फसलों के लिए प्रयोग में लाई जाती है, जिनके कंद, मूल, तना आदि को बीज के रूप में प्रयोग करने से पहले कुछ घंटों के लिए पानी में भिगोना आवश्यक होता है। जैसे आलू, अदरक, हल्दी, लहसुन, अरबी आदि इनके बीजोपचार के लिए सिफारिशशुदा फफूंदनाशक एवं पानी के घोल में बीज को निर्धारित समय के लिए भिगोया जाता है और बाहर निकलकर सूखाकर बुवाई की जाती है।

3. स्लरी उपचार :- यह एक व्यापारिक विधि है। इस विधि में ऐसे फफूंदनाशकों का प्रयोग किया जाता है, जो बीज की सतह पर लंबे समय तक रहने के पश्चात भी बीज के अंकुरण व उनकी गुणवत्ता को दुष्प्रभावित न करें। इसके लिए दवाई को निर्धारित मात्रा का गाढ़ा पेस्ट बनाकर बीज की मात्रा के साथ अच्छी तरह से मिलाया जाता है व अच्छी तरह सूखने के पश्चात बीज को बेचने के लिए पैक कर संग्रहित करते हैं।

उपयुक्त उपचारों के ईलावा अन्य उपचार भी किए जाते हैं। जैसे धूमीकरण, नमम-पानी घोल, जैविक टीका एवं दीमक नियंत्रण उपचार आदि। जिनका प्रयोग भी निर्धारित बीज, पानी एवं दवा की मात्रा का प्रयोग कर किया जाता है। इस प्रकार बीजोपचार कर किसान अधिकतम आर्थक लाभ खेती से ले सकते हैं।

बीजोपचार में सावधानियां

1. बीमार, जख्मी, हाथ पांव में खरोच वाले व्यक्ति एवं बच्चों व गर्भवती महिलाओं से बीजोपचार न करवाएं।

2. सूखी विधि से बीजोपचार के बाद बीज को गीली जगह पर न रखें।

3. गर्म हवा या गर्म पानी संयंत्र में बीजोपचार करते समय निश्चित तापमान और निश्चित अवधि का ध्यान रखना आवश्यक है। अन्यथा बीजों की अंकुरण क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

4. उपचारित बचा हुआ बीज घरेलू उपयोग व जानवरों को खिलाने के उपयोग में भूलकर भी न लाएं।

5. बीजोपचार के पश्चात हाथों को साबून व स्वच्छ पानी से अच्छी तरह धो लें।

6. बीजोपचार करते समय धूम्रपान नहीं करना चाहिए।

7. कवकनाशकी के खाली डिब्बों को नष्ट कर देना चाहिए।

8. कवकनाशी को सुरक्षित स्थान पर भंडारण करना चाहिए।

बीजोपचार क्यों ? :- उत्पादन बढ़ाने के लिए व फसल स्वस्थ रखने के लिए बीज का उपचार अति महत्वपूर्ण है। कहावत है, कि सावधानी में ही बचाव है, इस लिए समय रहते कम खर्चे पर बीजोपचार कर आने वाली बीमारी से बचा जा सकता है।

बीजोपचार के प्रकार :

1. बीमारियों से बचाव का उपचार (इसमें फफूंदनाशक दवाई शामिल है)।

2. दीमक/सफैद लट व जमीनी कीटों से बचाव का उपचार (कीटनाशी दवा द्वारा)।

3. जैविक खाद से बीज उपचार :- साफ फर्शा या प्लास्टिक सीट पर बीज को फैलाकर 60-70 ग्राम गुड़ को 2 कम पानी में भिगोकर बीज पर छिड़कें, ताकि बीज चिपचिपे हो जाएं, उसके बाद जीवाणु खाद का पाउडर बीज पर छिड़के व अच्छी तरह मिलाएं। शीशीबंद तरल जीवाणु टीके को बीज पर सीधा उड़ेल कर मिलाएं/गुड़ का घोल न डालें। छाया में सुखाने के बाद उपचारित बीज की 2-3 घंटे के बाद बुवाई करें।

बीजोपचार के लाभ :

1. बीजोपचार से बीज का अंकुरण प्रतिशत बढ़ जाता है।

2. बीज से उत्पन्न होने वाली बीमारियों से सुरक्षा हो जाती है।

3. बीज उपचार से मृदाजनित रोगों से सुरक्षा हो जाती है।

4. पौधों का एक समान विकास होता है।

5. दलहनी फसलों से नाईट्रोजन स्थिरिकरण करने वाली ग्रथियों में वृद्धि होती है।

जीवाणु टीके से उपचार के विभिन्न टीके :

1. एजोटोबेक्टर- (200 ग्राम या मि.ली./10 कि.ग्रा. बीज) :- अनाज वाली फसल जैसे गेहूं, जौ, धान आदि।

2. राईजोबियम- (200 ग्राम या मि.ली./10 कि. ग्रा. बीज) - दलहनी फसलों के लिए।

3. पी.एस.बी- (200 ग्राम/10 कि.ग्रा. बीज) :- सभी फसलों के लिए।

सावधानियां :

1. बीज को उचित निर्धारित रसायन की मात्रा से उपचारित करें।

2. बीज उपचार के बाद बीज को छाया में ही सुखाएं।

3. बीज उपचार करते समय हाथों में रबड़ के दस्ताने होने चाहिए तथा खुल वस्त्र न पहनकर टाईट वस्त्र पहनने चाहिए।

4. यदि किसान भाईयों को बीज तीनों दवाओं (कीटनाशक, फफूंदनाशक और टीका/कल्चर) से उपचारित करना हो, तो इसे क्रमबद्ध तरीके से उचारित करना चाहिए :

* कीटनाशक- (गीला उपचार एक दिन पहले)।

* फफूंदनाशक- (सूख उपचार बुवाई वाले दिन)।

* कल्चर- जीवाणु टीका खाद (आखिर में बुवाई से थोड़ा पहले)।

हरियाणा सरकार द्वारा नकली बीज पर अंकुश लगाने की दिशा में कदम

अब फसलों के बीज के थैलों पर लगेगा 'बार कोड टैग'

हरियाणा के कृषि मंत्री श्याम सिंह राणा ने बताया कि अब फसलों के बीज के थैलों पर 'बार कोड टैग' लगाया जाएगा। इस बार कोड को स्कैन करके बीज के निर्माता से लेकर वज़न, किस्म (प्रजाति) आदि के बारे में विस्तृत जानकारी मिल सकेगी। सरकार का यह महत्वपूर्ण कदम है। इससे नकली बीज पर अंकुश लगाने में मदद मिल सकेगी। वे विभाग की हाई पॉवर परचेज कमेटी की बैठक ले रहे थे। बैठक में 'बार कोड टैग' की

खरीद के लिए एक कम्पनी को टैंडर देने की स्वीकृति दी गई। बैठक में शिक्षा मंत्री माहीपाल सिंह ढांडा, कृषि विभाग के ए. सी.ए. राजा शेखर चुंडरू, निदेशक राजनारायण कौशिक, हरियाणा राज्य बीज प्रमाणीकरण एजेंसी के निदेशक डॉ. कुलदीप डबास भी उपथित थे। कृषि मंत्री ने बताया कि हरियाणा राज्य बीज प्रमाणीकरण एजेंसी द्वारा पंजीकृत बीज उत्पादकों को उनके प्रमाणित बीज को आगे बेचने के लिए अपनी सेवाएं। प्रदान की जाती है। यह बीज केन्द्र सरकार द्वारा जारी दिशा-निर्देशों के तहत उत्पादित किया जाता है। पूरी प्रक्रिया से गुजरने के बाद उत्पादित बीज को बिक्री के लिए पैक किया जाता है।

कृषि विज्ञान केन्द्र, घोह (पठानकोट) में इजरायली किस्मों को लेकर प्रयोग सफल

गर्मियों में सेब, एक पेड़ पर 25—30 किलो, जून में पक कर तैयार होंगे

इस बार पठानकोट ज़िले के लोग अपने बाग-बगीचों में इज़रायली सेब की किस्मों के पौधे लगा सकेंगे। ये तीन-चार साल में फल देने लगेंगे। कई मुस्लिम देशों की आंखों में चुभने वाले इज़रायल के सेब की कई किस्मों का सफल प्रयोग कृषि विज्ञान केन्द्र (के.वी.के.) घोह में किया जा रहा है। यहां लगे इज़रायली सेब के पेड़ फलों से लद गए हैं। एक पेड़ पर 25-30 किलोग्राम सेब लगे हैं।

के.वी.के. के फार्म हाउस में इज़रायली किस्में आना, गोल्डन डपसट, हरिमन आदि के पौधों पर लगे फल इज़रायल की भांति आकार में छोटे हैं। इनका रंग हरा व हल्का लाल-सा रहता है। मिठास और रस अधिक है। ये किस्में कंडी एरिया की जलवायु के अनुकूल हैं। स्थानीय किसान और चाहवान इस बार इन किस्मों को उगा सकेंगे। इसको दोमट मिट्टी चाहिए। कंडी एरिया में साल में 1700 एम.एम. बारिश होती है।

फरवरी अंत में लगते हैं फूल

केन्द्र में तैनात पौधों की माहिर असिस्टेंट प्रोफैसर डॉ. मनु त्यागी ने बताया कि फार्म हाउस में इज़रायली किस्में लगा रखी है। सेब के पौधों पर फरवरी के आखिर में फूल लगना शुरू हो जाता है। जून के आखिर में सेब पककर तैयार हो जाता है, जिसको बाज़ार में बेचने के लिए ले जाया जाता है। कृषि विज्ञान केन्द्र के कृषि व फल विशेषज्ञों और अन्य वैज्ञानिकों की मेहनत रंग लाई है। उल्लेखनीय है कि दुनियाभर में सेब की 7500 से ज्यादा किस्में पाई जाती हैं।

पौधों की कटाई-छंटाई दिसंबर या जनवरी में, किसान लगाएंगे पौधे

एक पौधे पर 25 से 30 किलोग्राम सेब लगते हैं। सेब के पौधों की कटाई दिसंबर या जनवरी में की जानी चाहिए। सेब की फसल पहाड़ी फसल है, जबकि आना, गोल्डन डपसट और हरिमन किस्में गर्मी वाले प्रदेशों में भी हो सकती हैं। ये किस्में इज़रायल की है, जहां गर्मी बहुत होती है। इन किस्मों के पेड़ 40 डिग्री सैल्सियस तापमान पर भी फल दे सकते हैं। स्थानीय लोग इस बार सेब के पौधे लगाएंगे।

कृषि एवं कृषि संबंधित विषयों पर आधुनिक जानकारी लेने हेतु पढ़ें

खेती संदेश

साप्ताहिक कृषि समाचार पत्र

किसान भाईयों व डीलर/डिस्ट्रीब्यूटरों के लिए

चंदों में विशेष छूट

एक वर्ष 500/- रुपए

दो वर्ष 800/- रुपए

पेमेंट करने के पश्चात् अपना डाक पता इस नंबर पर भेजें :

90410-14575

KHETI DUNIYAN

TID - 62763351

चंदे भेजने हेतु QR कोड सकैन करें।

खेती दुनिया (पब्लीकेशनज़)

के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड, पटियाला

पड़ रही गर्मी से बिगड़ी पशुओं की सेहत, 20 फीसदी तक दूध घटा

चिकित्सकों की सलाह – अपने पशुओं को लेकर बहुत ज्यादा सजगता बरतें पशुपालक

पशुओं की देखभाल करते पशु चिकित्सक डॉ. विजय सनसनवाल।

गत् दिनों से पारा चालीस डिग्री सैल्सियस से ऊपर चल रहा है। रिकॉर्डतोड़ गर्मी के असर से इंसानों के साथ-साथ पशु-पक्षी भ्जी अछूते नहीं हैं।

आसमान से बरस रही आग से पशुओं की सेहत बिगड़ रही है। प्रचंड गर्मी से दुधारू पशुओं का दूध उत्पादन 20 फीसदी तक गिर गया है। वहीं, पशु-पालन विभाग के पूर्व चिकित्सक पशु-पालकों व किसानों को बहुत ज्यादा एहतियात बरतने की सलाह दे रहे हैं। जगाधरी क्षेत्र में पशु-पालक महेंद्र सिंह, फूल्ला राम, विनय कुमार आदि का कहना है कि खराब मौसम के कारण पशुओं की खुराक बहुत कम हो गई है। जर्सी ब्रीड के पशु बहुत ज्यादा गर्मी मान रहे हैं। बुखार की भी इक्का-दुक्का गोवंश में शिकायत है। उनका कहना है कि दुधारू पशुओं का 15 से 20 फीसदी तक दूध कम हो गया है। पशु-पालन विभाग के पूर्व चिकित्सक डॉ. संत भारद्वाज का कहना है कि इस बार गर्मी समय से पहले बढ़ने लगी है। उनका कहना है कि पशु-पालक बहुत ज्यादा सावधानी बरतें। पशुओं को छायादार व हवादार जगह में रखें। इन्हें ताज़ा चारा ही दें।

पशुओं को दिन में कम से कम तीन बार साफ पानी से नहलाएं। इन्हें सुबह, दोपहर, शाम व देर रात गए पानी जरूर पिलाएं। डॉक्टर भारद्वाज का कहना है कि पशुओं की खुराक पर विशेष ध्यान दें। पशुओं को गर्म-सर्द कतई न होने दें। उनका कहना है कि ऐसे मौसम में हीट स्ट्रोक का बहुत ज्यादा खतरा होता है। इसलिए दिन में पशुओं को कतई बाहर न निकालें। भीषण गर्मी से दुधारू पशुओं का दूध बीस प्रतिशत तक कम हो गया है।